स्वास्थ्य
कैसे
पाया ?
संपादक •
विट्ठलदास मोदी
आरोग्य मंदिर
प्रकाशन

आरोग्य-ग्रंथमाला—६

स्वास्थ्य कैसे पाया ?

[रोगमुक्तिके स्वानुभव]

आरोग्य-मंदिर-प्रकाशन

मुख्य विक्रेता : सस्ता-साहित्य-मंडल, नयी दिल्ली

प्रकाशक

आरोग्य मंदिर प्रकाशन

आरोग्य-मंदिर

गोरखपुर-२७३००३

पहली बार	:	मार्च	१९५३,	५०००
दूसरी बार	:	जनवरी	१९५७,	५०००
तीसरी बार	:	जून	१९६५,	५०००
चौथी बार	:	दिसम्बर	१९८१,	५०००
पांचवी बार	:	दिसम्बर	१९८७,	५०००
छठवीं बार	:	जुलाई	१९९४,	५०००

मूल्य : बारह रुपया

मुद्रक--अशोक मुद्रण गृह,
५२/४२, ताशकन्द मार्ग, इलाहाबाद

प्रकाशकीय

मनुष्य प्रकृतिकी संतान होते हुए भी उससे दूर हटकर, उससे अपना नाता तोड़कर अपनी परिमित बुद्धिसे वर्तमान सभ्यताका जो ताना-बाना जोड़ता रहा है वह उसके व्यावहारिक जीवनमें भले ही सहायक होता हो, पर मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्यके क्षेत्रमें प्रवेश कर उसने विषम पाशका रूप धारण कर लिया है जिससे वह उसके लिए वरदानके बदले भयंकर अभिशाप ही बन गया है। उसमें उलझनेपर---रोगका शिकार होनेपर---वह उसीके अंदर हाथ-पैर मारता और छुटकारेके लिए उसीके सूत्रोंका सहारा लेता है जिससे वह मुक्त होनेके बजाय और उलझता ही जाता है।

स्वास्थ्यका रक्षण करनेवाली प्राकृतिक शक्ति शरीरके ही अंदर निहित है और प्राकृतिक नियमोंके उल्लंघनके कारण इसके मंद पड़नेपर ही शरीरपर रोगोंके आक्रमण होते हैं, पर इसका तात्त्विक ज्ञान न होनेके कारण मनुष्य इस तथ्यकी ओर ध्यान न देकर रोगके निवारणके लिए कृत्रिम साधनों---औषधों---का सहारा लेता और इस प्रकार प्रकृतिके नियम और कार्यमें हस्तक्षेप करता है। जिसका वह कठिनतर रोगके रूपमें दंड देती है। इस शक्तिके उद्दीप्त होनेपर ही रोगका निवारण हो सकता है और यह कार्य प्राकृतिक नियमों और साधनोंके ही द्वारा संपन्न भी हो सकता है, अन्य प्रकारसे नहीं। इसलिए औषधादि कृत्रिम साधनोंद्वारा आरोग्यलाभका प्रयत्न करना बबूलसे आमकी आशा करनेके समान ही निरर्थक होता है।

प्राकृतिक चिकित्सा, प्राकृतिक साधनोंके ही द्वारा पूर्ण आरोग्य प्रदान करती है और मनुष्यका जीवनसंबंधी दृष्टिकोण बदलकर उसे ऐसे सांचेमें ढाल देती है जिसमें उसका स्वास्थ्य और सुख आजीवन सुरक्षित बना रहता है। चिकित्साका मूल सिद्धांत तो मानव-जातिकी ही तरह प्राचीन

है, पर उक्त साधनोंके प्रयोगकी विधि अर्वाचीन, किंतु विस्तृत अनुभवोंके आधारपर निर्मित हुई है जिससे इसे उपचारकी एक विशिष्ट पद्धतिके रूपमें मान्यता प्राप्त हुई है। इस मान्यताका विशिष्ट कारण इसका चमत्कारपूर्ण प्रभाव ही है जिसने औषधोपचारसंबंधी प्रचलित विश्वासों-को भ्रमपूर्ण सिद्धकर स्वास्थ्य-जगत्को एक ऐसे अच्छे मार्गका प्रदर्शन किया है जिसपर गमन करनेमें कहीं किसी प्रकारका संकट प्रस्तुत होनेकी संभावना नहीं है।

किंतु कठिनाई यह है कि मनुष्यकी प्रवृत्ति स्वभावतः रूढ़िवादकी ओर होती है, वह नये विषयको संदेहकी दृष्टिसे देखता है और प्रचलित विश्वासों-का त्याग करनेका जल्द साहस नहीं करता, जिस मार्गसे लोगोंको जाते देखता आया है उसीको ग्रहण करनेमें अपना कल्याण समझता है—भले ही वह मार्ग उसे विनाशकी खाईकी ही दिशामें क्यों न ले जाता हो। मनुष्य-की यही मनोवृत्ति प्राकृतिक चिकित्साकी प्रभावकारिताका विश्वास होने-पर भी उसे इस ओर से विरतकर औषधोपचारका मार्ग अपनानेके लिए प्रेरित करती है जिससे वह स्वास्थ्यलाभके सर्वोत्तम साधनसे वंचित होकर मरीचिकाके पीछे दौड़ता रहता है, पर उसे जीवनमें कभी कहीं भेंट नहीं होती—वास्तविक स्वास्थ्य स्वप्नका ही विषय बना रहता है।

ऐसे लोगोंके विश्वास और साहसको बल प्रदान करनेमें रोगियोंके निजी अनुभव विशेष रूपसे सहायक होंगे, इसी विचारसे प्रेरित होकर कुछ ऐसे रोगियोंके अनुभवोंका संग्रह पुस्तकके रूपम प्रस्तुत किया जा रहा है जो इस चिकित्साके द्वारा कठिन रोगोंसे छुटकारा पाकर पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त करनेमें सफल हुए हैं। अगर इस प्रकारके अनुभव एकत्र किये जायं तो उनकी संख्या हजारों ही नहीं, बहुत अधिक हो जायगी, पर पुस्तकका कलेवर बढ़ाना अभीष्ट न होनेके कारण सिर्फ थोड़ेसे अनुभवोंका संग्रह किया जा रहा है। जो लोग हर तरहका उपचार कराकर थक गये हैं, रोग असाध्य करार दिया जा चुका है। और, चारों ओर नैराश्यका घोर

अंधकार छाया हुआ है उनके लिए यह संग्रह आशाकी किरण प्रमाणित होगा और उन्हें विश्वास हो जायगा कि प्रकृति-माताकी शरणमें जानेपर वह अवश्य आश्रय देगी और सारे कष्टोंका निवारणकर नवजीवन प्रदान करेगी ।

जिन सज्जनोंने हमारी 'रोगोंकी सरल चिकित्सा' पुस्तकका अध्ययन कर चिकित्साविषयक सिद्धांतोंका ज्ञान प्राप्त कर लिया है उनके लिए भी यह संग्रह बड़े कामका होगा । सिद्धांतसे समुचित लाभ उठानेके लिए उसके दूसरे पक्ष---क्रियात्मक रूप---का भी ज्ञान होना आवश्यक है । हमें आशा ही नहीं, विश्वास भी है कि वे इसके सहारे उन सिद्धांतोंको व्यवहारमें लानेकी विधि भलीभांति समझ जायेंगे, उनकी प्रयोगसंबंधी सारी कठिनाइयां दूर हो जायंगी और उन्हें अंधकारमें नहीं भटकना पड़ेगा । इस प्रकार यह संग्रह रोगियों और प्रयोगकर्ताओं---दोनोंके लिए समान रूपसे उपयोगी होगा, और इसीमें इसके प्रकाशनकी सार्थकता भी है ।

प्रकाशक

विषय-सूची

: १ :

कब्ज़

क्या कब्ज भी कोई रोग है ? है, पर बहुत कम लोग जानते हैं कि कब्ज क्या है। मैं भी नहीं जानता था। पर जब सिरमें दर्द रहने लगा, सुस्ती रहने लगी तो मैंने अपने घरवालोंसे इसकी शिकायत की। वे मुझे एक डाक्टरके पास ले गये। डाक्टरने कई प्रश्न किये तो मैं जान सका कि, दिनमें दो बार खुलकर शौच न जाना कब्ज है। पर दिनमें दो बार-की कौन कहे मुझे किसी दिन शौच होता था और किसी दिन होता ही न था। खैर, डाक्टर साहबकी चिकित्सा शुरू हुई। आरंभमें कुछ लाभ दिखा पर फिर हालत ज्यों-की-त्यों हो गयी। डाक्टर साहबने दूसरी दवा बदली। उसका हाल भी यही रहा। तो मैंने डाक्टर बदला। इसी बीच ज्वर आ गया। ज्वर आनेपर तो कब्ज और बढ़ गया। शौच तीन-तीन चार-चार दिनपर होने लगा। भूख चली गयी, पेट फूला रहता। लगता पेटमें हवा दौड़ रही है। गड़गड़ाहट होती रहती। मैं सूखने लगा और हड्डियोंका ढांचा रह गया। नींद आती ही न थी। मैं रातको खाट-पर करवट बदलता रहता। किसी काममें जी न लगता। कभी किसी अंगमें दर्द मालूम होता तो कभी किसी अंगमें। कमर तो टूटती ही रहती और कमरमें स्थायी तौरपर दर्द रहता।

इन सबके लिए दवा चलती रही। और, तीन वर्ष तक चलती रही। मैं विद्यार्थी था। इसी हालतमें घिसटता-पिसटता ग्यारहवें दर्जेमें पहुंच गया। अबतक डाक्टरों और उनकी दवाओंपर मेरे पिताजीकी गाढ़ी कमाई के बारह हजार रुपये खर्च हो चुके थे। पर, मेरी हालत सुधरने-

की कौन कहे, बिगड़ती ही गयी। हम डाक्टरोंकी शरण छोड़कर देशी दवाओंकी ओर झुके। एक हकीमजीसे भेंट हुई। उन्होंने मेरी हालत जानकर कहा कि, "मैं जरूर ठीक कर दूंगा पर दो हजार रुपये लूंगा।" मेरे घरवालोंको रुपयेसे अधिक मेरा स्वास्थ्य प्रिय था उन्होंने हकीमजीका दावा सही मानकर दो हजार रुपये उनको भेंट किये। हकीमजीने दवा शुरू की। नयी-नयी दवायें बनायीं। उनका कहना था कि, उनकी दवाओंसे मेरा कब्ज ही नहीं जायगा, मैं भरा-पूरा जवान बन जाऊंगा। पर हकीमजीका कोई कर्तब्र काम न आया। मैं जहां-का-तहां रहा। कब्ज नहीं गया और मेरा शरीर हड्डियोंका ढांचा ही रहा।

इसी समय मुझे एक मित्रके घर आरोग्य दिखायी दे गया। मैंने उसे उल्टा-पल्टा तो मुझे वह रुचिकर लगा। मैं वह उनसे लेकर घर आया और पूरा पढ़ गया। मेरे भाईजीने भी उसे पढ़ा। उन्होंने कहा "सारे रास्ते तो देख लिये, तू आरोग्य-मंदिर चला जा शायद वहीं तुझे तंदुरुस्ती मिल जाय। पता नहीं किस राह ईश्वर कृपा करता है।" उनकी बात मानकर मैंने आरोग्य-मंदिरके संचालकसे पत्रव्यवहार किया और उनकी अनुमति आनेपर में आरोग्य-मंदिर पहुंच गया। वहां तो एक अलग तरहकी चिकित्सा देखी। न दवा न इंजेक्शन। यहां मिट्टी, पानी, धूप, हवा, आकाशसे चिकित्सा हो रही थी। मेरे पहुंचनेपर व्यवस्थापकने मुझे मेरे लिए निश्चित कमरेमें पहुंचाया और मेरे लिए आवश्यक व्यवस्था की। फिर चिकित्सकने मेरे रोगका इतिहास सुना, मेरे स्वास्थ्यकी परीक्षा की और मेरी चिकित्सा शुरू हुई। पहले दिन पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी दी गयी, फिर इसके बाद एनिमा। सुबह-शाम कटिस्नान लेकर मैं टहलने जाने लगा। थोड़ी शक्ति बढ़नेपर मेरे लिए विशेष व्यायाम निश्चित हुआ और वह व्यायाम मुझसे संचालक अपनी निगरानीमें कराने लगे। शामको कब्ज दूर करनेके लिए आवश्यक आसन भी कराये जाते। अक्सर मेरे पेट और शरीरकी मालिश होती।

धीरे-धीरे मेरा कब्ज टूटा, शरीरमें स्फूर्ति आयी, कुछ खून भी शरीरमें दीखने लगा। नींद अच्छी तरह आने लगी, भूख लगने लगी और एक महीनेमें मैं पूरी तौरपर अच्छा हो गया।

आरोग्य-मंदिरसे आकर मैंने बी० एस-सी० में दाखिला लिया, फिर एम० एस-सी०की परीक्षा पास की। आज आरोग्य-मंदिरमें चिकित्सा कराये चार वर्ष हुए। इतने समयमें मैं जानता ही नहीं कि, कब्ज क्या है, रोग क्या है। न मेरे घरमें कभी किसीके लिए डाक्टर आया। घर आकर मैंने धीरे-धीरे घरमें सबके लिए आरोग्य-मंदिरमें सीखे भोजन और व्यायामके नियम चालू कर दिये थे। फिर कोई भी क्यों बीमार पड़ता? रोग तो कुदरतके नियम तोड़नेकी सजा है। न हम कुकर्म करेंगे और न सजा भुगतेंगे।

मेरी तंदुरुस्ती बढ़ती जा रही है। जब मैंने प्राकृतिक चिकित्सा अपनायी थी उस समय मेरा वजन ७५ पौंड था, वह इन चार वर्षोंमें बढ़कर १४५ पौंड हो गया है। —श्री राजाराम श्रीवास्तव

(२)

इस समय मेरी उम्र सत्तर वर्षसे अधिक हो रही है। किशोर अवस्थासे ही मैं बराबर आर्य-समाजके सम्पर्कमें रहा, जिससे मेरा विश्वास ईश्वर, धर्म एवं कर्मफलपर पूरा रहा। मेरा आहार-विहार प्रायः सदा सात्त्विक रहा। फिर भी, यह महाभयानक सर्वव्यापक पिशाच "कब्ज" रोगने मुझे घर दबाया। यह व्याधि मुझे कबसे सता रही थी, इसीसे अन्दाजा लगाना पड़ता है कि, सन् १९३७ में जब मैं केवल २७-२८ वर्षका था, अपने इस कष्टका विवरण लाहौरसे निकलनेवाले 'बूटी-दर्पण' नामक आयुर्वेदिक मासिक पत्रमें 'वैद्योंसे परामर्श' शीर्षकसे छपाया था, और २-४ प्रसिद्ध वैद्योंकी सम्मतियां भी मिली थीं। अतः मालूम होता है कि, उससे कुछ दिनों पहलेसे ही यह रोग मुझे सता रहा था।

मुझे तीन-तीन, चार-चार दिनोंतक शौच नहीं होता था। जब कभी बहुत कष्टके साथ आध-आध घंटे तक बैठनेपर कुछ होता भी था, तो वह इतना सूखा कड़ा गोल-गोल सुपारीके आकारका कि, जमीनपर गिरनेपर ठक्की आवाज हो जाती थी। उसपर सफेद या पीला लुआब जैसा चिपका रहता था। वह इतना कड़ा रहता था कि, अंगुलीसे दबानेपर जल्द दबता नहीं था।

बराबर सिरमें चक्कर, आंखोंके सामने अन्धेरा, जलन, सुस्ती, अनिद्रा, बदनमें खुजलाहट, भोजनमें अरुचि, निर्बलता तथा स्वभावमें चिड़चिड़ापन एवं छोटी-छोटी बातोंपर क्रोध होता ही रहता था। कभी-कभी हल्की खांसी तथा मंद ज्वर भी हो जाता था। शौच, स्नान, भोजन, विश्रामके जैसा प्रतिदिन तीनों समय नियमपूर्वक ओपधि-सेवन करना भी मेरी दिनचर्यामें थी। इस प्रकारका कष्टमय जीवन लगभग ४० वर्षोंतक काटता रहा।

मैं स्वयं एक आयुर्वेदिक चिकित्सक हूं। अपना चिकित्सा-व्यवसाय भी था; अतः पहले मैं खुद अपने अध्ययन तथा अनुभवके मुताबिक बराबर आयुर्वेदिक चिकित्सा करता आया। अपनी चिकित्सासे कुछ लाभ न देख बिहारके प्रसिद्ध वैद्योंके अलावा काशीके सुप्रसिद्ध वैद्यराजोंसे चिकित्सा करायी। प्रायः सभी चिकित्सासे एकाध महीनेतक नफा रहता था। ओषधियां प्रायः हल्के विरेचनवाली ही रहती थीं।

आयुर्वेदिक चिकित्सासे विशेष लाभ न देख मेरा ध्यान एलोपैथिकके ऊपर गया और मैं लगभग १० वर्षोंतक बराबर एलोपैथिक दवा सेवन करता रहा। हर जगह मुझे यकृत दोष, रक्तल्पता इत्यादि बताया जाता था। बराबर लिवर एक्स्ट्रेक्ट, विटामिन बी कम्प्लेक्स इत्यादि-इत्यादि टेबलेट, मिक्चर या इन्जेक्शन रूपमें दिया जाता था। एक बार मुझे थोड़ी खांसी तथा हल्का बुखार रहने लगा। भोजनमें बिल्कुल अरुचिके कारण निर्बलता भी आ गयी। उस समय एक डाक्टरने मुझे यक्ष्मा

घोषित कर स्ट्रेप्टोमाइसीनका इन्जेक्शन तथा टी0 बी0 की दवाएं दो महीनेतक सप्रेम प्रयोग कराया और दिन-रात चारपाईपर आराम करनेको कहा। पाठक समझ सकते हैं कि, उन दिनों मेरी क्या हालत हुई होगी। यह १९५४ की बात है। दो महीना इलाजके बाद, जब कुछ भी नहीं हुआ, तो एक दूसरे डाक्टरने मेरा वही पुराना यकृत दोष बताकर दवा किया, जिससे थोड़ा आराम हुआ। यक्ष्माकी घोषणाके बाद एक बार मेरी निर्बलता इतनी बढ़ी कि, मेरे दूर-दूरके शुभचिन्तक मुझसे अन्तिम भेंटके लिए आने लगे।

इस प्रकार एलोपैथिक चिकित्सासे भी मैं निराश होकर, अन्तमें कुछ दिन यूनानी चिकित्सा कर होमियोपैथिक दवा करने लगा। अन्य सभी चिकित्सा-पद्धतियोंके मुकाबले होमियोपैथीसे कुछ शीघ्र नफा मालूम होता था। पर, थोड़े ही दिन बाद फिर जैसे-का-तैसा। ओषधि कभी 'नक्स', कभी 'ब्रायेनिया' कभी 'पल्स' इत्यादि इत्यादि। साल डेढ़ सालतक भिन्न-भिन्न डाक्टरोंसे भी यही चला। अन्तमें मैं सभी दवाइयोंसे निराश हो गया और यह विश्वास हो गया कि, यह कब्ज दवाइयोंसे पिण्ड नहीं छोड़ेगा। उपद्रव भी नया-नया सताने लगा। टखनों और कमरमें ज्यादा दर्द रहने लगा। कभी उठना-बैठना भी मुश्किल हो जाता था। अन्तमें ओषधि-सेवन बंद कर मैं इस कोशिशमें रहा कि, कोई शारीरिक ज्ञानवाले योगी मिलें, जिनसे कोई ऐसी क्रिया प्राप्त हो, जिससे आंतोंमें बल आये और मल निकलनेकी शक्ति जो प्रायः निर्बल हो गयी है फिरसे जागृत हो जाय। अब मैं दवा छोड़ कर किसी योगीकी तलाश-में लगा। मुझे रामतीर्थ योगाश्रम बम्बईका पता लगा और वहां लिखने-पर मुझे बम्बई आनेको लिखा गया। मैं निर्बल हो गया था; अतः बम्बई जानेमें असमर्थ था। वहां नहीं जा सका। अब चारों तरफसे निराश हो अन्तमें भगवान्के भरोसेपर अपनेको सौंप यह कर्मोंका फल भोगना ही पड़ेगा, यह समझ धैर्यसे रहने लगा।

कुछ दिनोंके बाद १९६६ में मुझमें नवजीवनका संचार होनेका दिन आ गया और अपने कर्मोंका फल भुगतानेका दिन भी अब खतम होने को आया। मेरा लड़का सुरेशचन्द्र सहायक विद्युत् अभियन्ताके पदपर नियुक्त होकर शिमला गया और वहां अपने साथियोंमें पारिवारिक चर्चा-के सिलसिलेमें मेरे रोगका भी जिक्र आया, तब एक साथीने प्राकृतिक चिकित्साके सम्बन्धमें बताया और आरोग्य- मन्दिर, गोरखपुरका नाम बताया। मेरे लड़केने शीघ्र ही यह चर्चा मेरे पास लिख भेजी। साथ ही एक प्राकृतिक चिकित्साकी छोटी-सी किताब भी। मैंने उसको पढ़ा तथा आरोग्य मन्दिरको नियमावली आदिके लिए लिखा। साथ ही अपने एक सम्बन्धीको, जो गोरखपुर ही रहते हैं, पता लगानेको लिखा। मेरे सम्बन्धी जो आरोग्य-मन्दिरसे पूरे परिचित थे, पूरा विवरण लिख भेजा। अब क्या था, मेरे सारे संकटका दिन टल गया। आरोग्य-मन्दिरसे एक परिचय-पत्र आया, जिनमें पूछे गये प्रश्नोंके उत्तर लिखकर मैंने भेज दिये।

एक ही सप्ताहके भीतर मेरे पत्रके उत्तरमें आरोग्य-मन्दिरसे मेरे रोगकी चिकित्सा-विधि मिल गयी—प्रात: एक गिलास ठंढे जलमें एक तोला कागजी नीबूका रस डालकर पीना तब शौच जाना। मुख-हाथ धोनेके बाद पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी २० मिनटतक लगाना। उसके बाद टहलने जाना, टहलकर आनेपर शरीरकी मालिश कर पूर्णस्नान करना। पुन: एक पाव कोई फल खाकर एक पाव कच्चा दूध बिना शकरके पीना। दोपहरको मोटे आटेकी रोटी, उबाली हुई सब्जी बिना मसालेकी खाना फिर शामको भी यही क्रम लिखा था। मैंने इसी विधिसे अपना खान-पान बना लिया और कुछ ही दिनोंमें मेरा स्वास्थ्य सुधरने लगा। दोनों वक्त मुलायम पाखाना आने लगा। सारा उपद्रव गायब हो गया और मुझे पूर्ण विश्वास हो गया कि, अब मैं नवजीवन पाऊंगा।

उपर्युक्त विधिमे अपनी चिकित्सा करनेपर मुझे काफी सन्तोष हुआ।

डा० मोदीजीका पत्र बीच-बीचमें भी मुझे मिला करता था, जिसमें उन्होंने मुझे काफी धैर्य दिलाया था। फिर भी आदरणीय मोदीजीके सम्पर्कमें कुछ दिन रहकर विशेष लाभ उठानेका विचार हुआ। अप्रैल १९६८ में मैं आरोग्य-मन्दिरमें आया और लगभग एक महीनेतक रह पूर्ण स्वस्थ हो गया।

आरोग्य-मन्दिरका वातावरण, सुरम्य स्थान, चारों तरफ हरियाली, शान्तिपूर्ण जीवन, श्रद्धेय मोदीजीका प्रेमपूर्ण व्यवहार, प्रत्येक रोगियोंसे मिलना, उनके कष्टोंको समझकर धैर्य देना। स्वास्थ्योपयोगी सात्त्विक भोजन एवं कर्मचारियोंका सद्व्यवहार आरोग्य होनेमें और भी चार-चांद लगा देता था। मेरे स्वास्थ्य-लाभमें प्रतिदिन सफलता मिलती गयी और मेरा वह पुराना कष्ट जो ४० वर्षोंतक भोगा था सब दूर हो गया।

अब मैं पूर्ण स्वस्थ हूं। प्रतिदिन ५ मील टहलता हूं। काफी अध्ययन करता हूं। प्रातः ४ बजे उठ शौचादिसे निवृत्त हो परमात्माका भजन करता हूं। विना चश्मेका जो लिख-पढ़ नहीं सकता था, अब विना चश्मेके रातमें भी महीन-से-महीन अक्षर पढ़ लेता हूं। मेरे परिचित तथा साथी मेरे स्वास्थ्यमें इस प्रकारका परिवर्तन देख चकित हो जाते हैं। कई मुझसे प्रेरणा पाकर स्वयं आरोग्य-मन्दिरमें जा अपनी चिकित्सा कराकर लाभ उठा चुके हैं।

अब तो सालमें एक बार १०-५ दिनोंके लिए स्वास्थ्य-सम्बन्धी प्रेरणाके लिए आदरणीय श्रीमोदीजीकी सेवामें रह लाभ उठाता हूं आरोग्य मंदिरको मैं तीर्थस्थान माना हूं।

हां! एक बात मैं यहां कह देना चाहता हूं कि, यहां चिकित्सा करानेके लिए कुछ धैर्यकी आवश्यकता है। यहां रोगके उपद्रवको ओषधिके बलपर दवा नहीं दिया जाता। यहां तो रोगके जड़को काटकर दूर किया जाता है अतः धैर्य पूर्वक तपस्या करनेसे ही यथोचित लाभ मिलता है।

—श्री सत्यदेव नारायण वैद्य

बीच मैंने खीरा, संतरा, खरबूजा खाया। और, फिर अब रोटी-सब्जी-वाले प्रारंभिक भोजन पर आ गया।

मेरा स्वास्थ्य अब बिलकुल ठीक है। मुझे खूब नींद आती है। पेट-में गैस नहीं बनती और टट्टी साफ होती है। मेरे माथेका चमड़ा जो काला पड़ गया था, अब स्वस्थ त्वचाका रूप ले चुका है और जो फटा था, स्वाभाविक हो गया है।

मैं आरोग्य-मंदिरकी चिकित्सासे इस बीच कितना प्रभावित हुआ, यह इसी बातसे स्पष्ट है कि, मैंने घरसे अपने एक छोटे भाईको इलाजके लिए यहां बुलवा लिया है और भरती करा दिया है। और, १७ मईको, ३ दिन मार्चके, ३० दिन अप्रैलके और १७ दिन मईके कुल ५० दिन आरोग्य-मंदिरमें रहकर घर वापस जा रहा हूं। इन ५० दिनोंमें मैंने वह पाया, जिसे २ वर्षों तक न पा सकता था—काश मैं पहले यहीं आता।

—श्री कमला प्रसाद राव

: २ :

स्वप्नदोष

"डाक्टर साहब मुझे मरनेकी दवा दे दें।" सुनकर मेरा ध्यान एक आतुरके प्रति आकर्षित हुआ। मैंने देखा कि, एक लंबा किंतु अति क्षीण-काय व्यक्ति मेरे पार्श्वमें ही प्राचीरके सहारे टांग पसारे आसीन है। ध्यानसे देखा तो वह परिचित हरिजन युवक निकला। उसके बाल्य-कालीन शारीरिक गठन एवं सुस्वास्थ्य तथा साम्प्रतिक अस्वास्थ्य व कृशताके महान् अन्तरने मुझे विस्मित कर दिया। मैंने संभलकर कहा कि, भाई! सर्वप्रथम तो मैं यह जानना चाहूंगा कि, तुम्हारी यह दशा, क्यों और कैसे हुई? युवक मौन रहा। इसपरसे मुझे लगा कि, उसे वस्तुस्थितिको प्रकट करनेमें संकोच अनुभव हो रहा है; किन्तु मुझे बीती, विगत अनिवार्यतः जाननी थी; अतएव मैंने कुछ बलपूर्वक अपने प्रस्तावको दोहराया। आखिर वह लिखित विवरण देनेको प्रस्तुत हुआ और उसने ऐसा किया भी।

रोगी युवक ने जो कुछ विवरण मुझे लिखित प्रकट किया, उसे ज्यों-का-त्यों उल्लेख करना तो शिष्टताकी मर्यादा लांघ जाना होगा, तो भी मैं उसका सारांश प्रकट करनेकी आवश्यकता इसलिए मानता हूं कि, मुझे आशा है कि, उक्त युवककी दुर्गतिके कारणोंको जानकर हमारे गुमराह युवक भाई कुछ संभलेंगे। आये दिन हमारे देशके अधिकांश युवक फैशनपरस्तीके मोहमें फंसकर कतिपय दुर्व्यसनोंके दास बनते जा रहे हैं। फलतः उनमेंसे बहुतोंको देर या अबेरमें अपने पूर्व कृत्योंपर पश्चात्ताप करना पड़ता है; किंतु "अब पछताये होत क्या? जब

चिड़ियां चुग गईं खेत।" यौवनकी इन आधुनिक भूलोंकी बदौलत आज, ऊपरसे हृष्ट-पुष्ट दीखनेवाले इन युवकोंमेंसे, मेरा ख्याल है कि, आधेसे अधिक आंतरिक वास्तविक युवकत्वके न्यूनाधिक दिवालिये होते हैं। आज ऐसे ही युवक-समाजकी बदौलत धूर्त ओषधि-विक्रेताओंका व्यापार उन्नतिपर है, जब कि, लाखों कुलवधुएं अपने भाग्यको कोसती हैं।

हां, तो उक्त आतुरने अपने नवयौवनके अनियंत्रित तरंगमें प्रवाहित होकर वीर्यनाशके उन अनेक दुष्कृत्योंको अपने स्वभावमें प्रश्रय दिया, जो आजके युगमें गुमराह एवं फैशनपरस्त युवक समाजमें प्रचलित तथा व्यवहृत हो रहे हैं; किंतु हस्त........को तो उसने अपना मानो नित्यकर्म ही बना लिया ! इस लतका अंत तब हुआ, जब कि युवकके संबंधित गुप्तांगका प्राकृतिक स्वरूप विनष्ट हो गया तथा उसको असाधारण एवं भयंकर प्रमेह व स्वप्नदोष आदि अनेक रोगोंने धर दबाया। अब वह सर्वथा क्लीव हो चुका था, यद्यपि वह ऊपर से हट्टा-कट्टा युवक दीखता था।

अतएव उसके परिजनोंने उसका विवाह कर दिया। विवाहोपरांत उक्त युवकको अपनी स्थिति सुधारनेकी चिंता हुई; किंतु संकोचवश वह किसी योग्य चिकित्सक की अपेक्षा अधकचरे एवं नीम हकीम व्यक्तियों-के यहां गया तथा 'चंद घंटोंमें खोई जवानीको वापिस ला देनेवाली' विज्ञा-पित विषैली ओषधियोंका प्रयोग करता रहा। इस प्रकार ऊटपटांग चिकित्सा करके उसने अपने शेष स्वास्थ्य तथा गांठके ढाई-तीन सौ रुपये बर्बाद कर दिये। यही नहीं प्रत्युत 'मर्ज बढ़ता गया, ज्यों-ज्यों दवा की।' अब तो उसके वीर्य-स्राव तथा स्वप्न-प्रमेहकी कुछ मर्यादा नहीं रही। वह नितांत क्षीणकाय और शक्तिविहीन हो गया।

मैं स्वयं एलोपैथी का चिकित्सक हूं और रोगी मेरे पास आया था, इसलिए मैं अपना नाम प्रकट नहीं करना चाहता, उसकी शोचनीय दशा-का अनुभव करके मुझको प्राकृतिक चिकित्साकी सुध आयी और मैंने उसे आरोग्य-मंदिर जाने की सलाह दी।

लौटने पर उसने बताया कि, आरोग्य-मंदिरमें दूसरे दिनसे कटि-स्नान प्रारंभ कराया गया। आगे चलकर प्रातः मेहन-स्नान और संध्याको कटिस्नानका क्रम रखा गया। कभी-कभी धूपमें लिटाकर स्वेदन-क्रिया भी करायी गयी। भोजनमें गेहूंका दलिया, कभी रोटी, हरे शाक और छाछकी व्यवस्था की गयी। जैसे-जैसे शक्तिका संचार होता गया, रोगीको टहलने, तेज चलने तथा कुछ श्रम करने को प्रेरित किया गया। एक मासमें इस साधारण-सी चिकित्सासे युवकको कुछ लाभ प्रतीत होने लगा; अतः उसने पूरे लगनके साथ विश्वासपूर्वक चिकित्सा जारी रखी। ईश्वरकी कृपासे लाभ बढ़ता गया तथा युवक क्रमशः स्वस्थ होने लगा। इस प्रकार कुल पांच मासकी चिकित्सा पूरी की। लौटने पर आभार प्रकट करते हुए उस युवकने कहा—"बाबूजी ! अब तो मुझे जीनेकी दवा मिल गयी। इस पर मैंने युवकसे कुछ प्रश्न किये और उसने जो उत्तर दिये उससे मुझे लगा कि, अब वह रोगरहित यानी स्वस्थ हो चुका है।

यह वृत्तांत, अबसे पंद्रह वर्ष पूर्वका है। संबंधित व्यक्ति आज तीन संतानोंका पिता बना हुआ विद्यमान है। स्वास्थ्य, उसका ईर्षाके योग्य है। गत पंद्रह वर्षोंमें उसे कोई भी रोग नहीं हुआ। वह प्रकृतिकी कृपाकी कथा सबको सुनाता है और प्राकृतिक जीवन व्यतीत करनेकी सलाह सबको अपनी सरल-सीधी भाषामें देता है। मैंने तो परीक्षण मात्रकी दृष्टिसे आरोग्य-मंदिर भेजा था; पर अब प्राकृतिक चिकित्सापर मेरी इतनी निष्ठा हैं कि, लगभग ३० रोगी आरोग्य-मंदिर भेज चुका हूं।

—एक ऐलोपैथ

: २ :

संग्रहणी

काफी समयसे मेरा व्यवसाय ट्रकोंका रहा है। जब कभी ट्रकोंके साथ मुझे जाना पड़ता तो होटलोंमें खाना खाना पड़ता और सोनेकी तो न कोई व्यवस्था ही हो पाती और न निश्चित समय ही। ट्रकमें ही सोकर नींद पूरी करनी पड़ती। खान-पान, आहार-विहार और अनियमित निद्राका यह प्रतिफल हुआ कि, पेट खराब रहने लगा। इलाज शुरू किया, काफी अरसे तक चलाया, पर कुछ भी लाभ नजर न आया। और, अंतमें मेरे रोगका नामकरण 'संग्रहणी' कर दिया गया।

इस कष्टमें मुझे रोज दिनमें १०-१२ बार शौचके लिए जाना पड़ता। मलमें निरा आंव गिरता और आंतोंमें घाव हो गये। एलोपैथी, होमियोपैथी, आयुर्वेदिक, यूनानी किसी भी प्रकारकी दवा नहीं छोड़ी। जिसने जो खर-पतवार दवा के रूपमें बताये, आजमाया। आगरा, दिल्ली, मुरैना, ग्वालियरके डाक्टरोंके इलाज कराये; किन्तु किसी प्रकारका लाभ नहीं दिखा।

पांच वर्षों तक मैं इस कष्टद बीमारी से पीड़ित रहा। दस-बारह बार आंव, प्रतिदिन पड़नेका यह फल हुआ कि, मेरा चेहरा पीला पड़ गया। और, त्वचा, बूढ़ों—जैसी पतली पड़ गयी। बाहें और टांगे सूख कर मुर्गी-छाप हो गयीं।

भोजन कुछ भी नहीं पचता था। केवल मूंगकी दाल और चावलकी खिचड़ी, दहीके साथ चार-छह चम्मच खाता था।

इतने इलाजके बाद जब टट्टियां नहीं बंद हुई और शरीर गलने लगा, तो जी घबराने लगा। चिन्ता-सी व्याप्त हो गयी कि, इस कठिन रोगसे कैसे मुक्ति मिलेगी।

इसी बीच धौलपुरके दो मित्रोंसे मुलाकात हुई। वे मेरा पीला पड़ा चेहरा देखकर चकित रह गये और पूछ बैठे—"तुम्हें हुआ क्या है?" मैंने उनको अपनी रामकहानी कह सुनायी। मेरे वे दोनों ही मित्र श्री बंसल साहब और श्री कैलाशचन्द्र आरोग्य-मंदिर, गोरखपुरमें अपना इलाज करा चुके थे। उन्होंने मुझे भी आरोग्य-मंदिर जाकर इलाज़ करानेकी सलाह दी।

मैं सभी सम्भव इलाज तो आजमाही चुका था और कोई नया रास्ता मुझे सूझ नहीं रहा था, अतः मैंने आरोग्य-मंदिरसे पत्रव्यवहार किया। वहांसे एक सुंदर-सा परिचय पत्र और एक प्रश्नपत्र आया। मैंने प्रश्नपत्र भर कर आरोग्य-मंदिर भेज दिया। वहांसे बड़ा आशापूर्ण उत्तर आया उसमें मुझे गोरखपुर आजानेको कहा गया था।

बच्चोंको जब गर्मियोंकी छुट्टियां मिलीं, तो बच्चोंको उनके नाना-के घर पहुंचाकर ५ मई १९६८ को मैं अपनी पत्नीके साथ आरोग्य-मंदिर पहुंचा। वहां समय पर वहांके संचालक श्री विट्ठलदास मोदीसे भेंट हुई। उन्होंने मेरी परीक्षा की और हम दोनोंके ठहरनेकी व्यवस्था कर दी।

जो कमरा हमें मिला, मकानकी पहली मंजिल पर था—खासा हवादार और आरामदेह। कमरेसे संलग्न एक सामान रखनेका कमरा तथा शौचालय और स्नानागार भी था।

आरोग्य-मंदिरमें मुझे कुछ दिन फलाहार कराकर रसाहार कराया गया। रसाहार लगभग १५ दिनोंतक चला। शरीरमें काफी दवाइयां पहले पहुंच चुकी थी, अतः उनकी प्रतिक्रिया होनी ही थी। उसके फलस्वरूप मेरे पेशाबमें जलन मालूम होने लगी तथा शरीरमें दर्द और

ऐंठन रहने लगी। पर, आरोग्य-मंदिर तो प्राकृतिक चिकित्सालय है। वहां कोई दवा नहीं दी जाती। पूरा इलाज मात्र मिट्टी, पानी, धूप, हवा और भोजन-सुधार द्वारा होता है। मेरे इन कष्टोंके समय मोदीजी ने खीरेका रस लेनेकी सलाह दी। इससे पेशाबकी जलन भी शांत हो गयी और अन्य नये कष्ट भी जाते रहे।

मेरा शरीर तो पूरी तरह टूट चुका था, अतः मात्र एक दिनका उपवास कराकर मठाकल्प शुरू कर दिया गया। पहले दिन मात्र एक पाव दही पूरे दिनमें चार समय दिया गया।

दूसरे दिन आधा सेर और इस प्रकार उत्तरोत्तर वृद्धि करते-करते पांच सेर तक दहीकी मात्रा पहुंची और फिर घटाते-घटाते दो सेर होने पर धीरे-धीरे रोटी-सब्जी पर लाया गया। यह मेरा मठाकल्प ४० दिनों तक चला।

कल्पके समय दही मेरे लिये दिनमें कई बार जमाया जाता क्योंकि कल्पमें खट्टा दही बिलकुल प्रयोग नहीं किया जाता।

कल्पके समयमें मुझे रोजाना एनीमा दिया जाता।

प्रतिदिन मलके साथ गंदा बदबूदार पदार्थ निकलता।

इलाजमें रोजाना प्रातः-सायं कटि-स्नान लेना पड़ता। इसके अतिरिक्त दिनमें कभी पेटपर मिट्टीकी पट्टी, कभी सारे बदनकी गीली पट्टी, कभी भाप-नहान, कभी मेहन-स्नान, कभी पैरोंका गर्म नहान, पेटपर गीली पट्टी आदि इलाजके रूपमें मिलते थे। कभी-कभी मालिश भी दी जाती। यहांकी वैज्ञानिक मालिश सचमुच बड़ी ही सुखकर है।

जिन दिनों मैं वहां था, पूरा आरोग्य-मंदिर देशके कोने-कोनेके आए मरीजोंसे भरा था।

जब मैंने आरोग्य-मंदिर छोड़ा, मुझे अपनेमें पुनः स्फूर्तिका अनुभव हो रहा था, मेरा वजन बढ़ गया था और कष्ट तो चला ही गया था।

आरोग्य-मंदिरमें मैंने जीवनका नया ढंग सीख लिया और घर आने पर उसी प्रकार जीवन व्यतीत करता हूं।

इसीका फल है कि, इतने दिन बीतनेपर भी पूर्ण स्वस्थ हूं।

—श्री ठाकुरदास आहूजा

: ४ :

दमा

मेरी उम्र इस समय २६ वर्ष है। मैं बचपन से ही दमेकी मरीज हूं। कबसे मरीज हूं, यह बता सकना संभव नहीं है; क्योंकि जबसे होश संभाला है अपने को मरीज पा रही हूं। मेरे पिता कलकत्तेके बासी हैं। उन्होंने तरह-तरहका मेरा इलाज कराया। अंतमें मुझे इन्जेक्शन लेना सिखा दिया गया। इन्जेक्शन मैंने अपने हाथसे, विश्वास मानें, कई हज़ार लिये हैं। हमेशा इंजेक्शन पास रखती। गरमीमें तो कुछ घूम फिर भी लेती थी, पर जाड़ेके चार महीने मेरे खाटम ही बीतते। दमा बढ़नेपर रात हो या दिन इन्जेक्शन लेकर राहत पानेकी कोशिश करती। एक दिन तो मुझे अट्ठाइस इंजेक्शन लेनें पड़े। इन्जेक्शन क्या थे, यह न पूछें। अंतमें तो मुझे दो बार नित्य पथेड्रिन का इन्जेक्शन लेना पड़ता था।

मेरे दमेके इलाजके लिए मेरे पिताजी ने मुझे मेरे फूफाजी जो डाक्टर हैं और मुर्शिदाबादके निवासी हैं, मुझे उनके पास दो साल रक्खा। उनका ख्याल था कि, मैं कमजोर हूं; अत: मुझे दमा है, तो वे मुझे मछली, मांस, अंडा अधिक-से-अधिक खिलानेकी कोशिश करते और दवा तो देते ही थे। पर, दो सालमें भी मैं जब जहां-की-तहां रही तो मेरे पिताजीने मुझे वापस बुला लिया। अब उन्हें लोगोंनें बताया कि, दवा छोड़ो, लड़की का हवा-पानी बदलो, तो उन्होंने मुझे पुरी भेज दिया, जहां मैं चार महीने रही। दवा भी लेती रही पर स्थान-परिवर्तनसे भी कोई लाभ नहीं हुआ।

सारे चिकित्सकोंमें यदि मुझे कुछ लाभ हुआ, तो डा0 विधानचन्द्र रायके सुझाव से। मैं उस महान डाक्टरके दरवाजे तक कैसे पहुंची यह कथा अलग है; पर याद है कि, उन्होंने मुझे बड़े प्रेमसे देखा समझा और बोले कि, तुम्हें किसी दवाकी जरूरत नहीं है। तुम केवल सुबह नाश्तेके बाद और दोपहर-शाम भोजनके बाद दो-दो चम्मच सोडाबाई-कार्ब पानीमें मिला कर पी लिया करो। मैंने उनका नुस्खा आजमाया और दो वर्ष तक चलाया। आरम्भमें कुछ लाभ जरूर हुआ; पर धीरे-धीरे उनका नुस्खा भी नाकामयाब हो गया और मैं फिर दमेकी मरीज हो गयी।

इस बीच मेरी शादी हो गयी। उस महान् आत्माको मैं किन शब्दोंमें धन्यवाद दूं, जिन्होंने मेरे रोगको जानकर भी मेरे माता-पिता को पुत्रीके विवाहसे ऋण मुक्त किया। उन्होंने भी यही समझ कर विवाह किया था कि, वह गांव रखकर और उचित सेवा द्वारा मुझे रोग मुक्त कर लेंगे। पर, छह साल तकके उनके सतत् प्रयत्नसे भी जब मेरी दमेसे मुक्ति नहीं हुई तो वे भी निराश हो गये।

मैं समय काटनेके लिए कुछ-न-कुछ हमेशा पढ़ती रहती थी, तो मुझे साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान' में प्राकृतिक चिकित्सापर श्री विट्ठलदास मोदीका एक लेख पढ़नेको मिला। मुझे यह देखकर यह आश्चर्य हुआ कि, जो मैंने अनुभवसे जाना है, वही लेखकने लेखमें लिखा है, जिसे वे प्राकृतिक चिकित्सा कहते हैं।

मैंने अनुभवसे जाना था कि, मुझे उबली सब्जियां खानी चाहिए, मिर्च-मसाला, मांस-मछली नहीं खानी चाहिए। ठंढे पानीका स्नान मुझे राहत देता था, जिसका इस लेखमें प्रतिपादन किया गया था। तो मैं प्राकृतिक चिकित्साकी सम्पूर्ण जानकारीके पीछे पड़ गयी। इस खोजमें 'आरोग्य' से परिचय हुआ, आरोग्य-मन्दिरसे परिचय हुआ और मेरे मनमें प्राकृतिक चिकित्सा करनेके लिए आरोग्य-मन्दिर जाने-

का विचार आने लगा। यह विचार मैं दो वर्षतक अपने मनमें पाले रही और आरोग्य-मन्दिर पहुंचनेका प्रयत्न करती रही। फिर मैं पिछली जनवरीके आरम्भकी ठंढकमें जब कि, मेरा रोग खूब जोरों पर था, आरोग्य-मन्दिर पहुंच गयीं। उस समय मुझे दमा तो था ही, कमजोरी इतनी थी कि, एक फलाँग भी चलना कठिन था। शौच दस-बारह दिन पर एक बार पत्थरकी गोली-सा होता था, भूख नहीं थी, नींद नहीं थी, मैं हड्डीकी ठठरी मात्र थी। पर, जीनेकी इच्छा बलवती थी; अतः रोग मुक्त होनेके लिए मन ही मन छटपटाती रहती थी।

आरोग्य-मन्दिर पहुंचने पर डा० विट्ठलदास मोदीसे मेरी बात हुई। उन्होंने मेरी परीक्षा की। पर, परीक्षा उनकी विचित्र होती है। वे रोग और रोगीकी दशा केवल उसका मुख देखकर जान लेते हैं। न किसी यंत्रका प्रयोग करते हैं न नाड़ी ही छूते हैं। खैर उनकी इस परीक्षा-विधिसे मुझे थोड़ा असंतोष जरूर हुआ; पर जिसके पास श्रद्धा लेकर आयी उनसे चिकित्सा तो करानी ही थी, आज्ञाके अनुसार पूरी तरह चलना था।

पहली बात जो उन्होंने मुझे बतायी, वह यह थी कि, मुझे दमा नहीं है, केवल पित्त-विकार है जिसकी वजहसे मल सूख जाता है और कब्जकी वजहसे वायु दूषित होकर श्वास-कष्ट होता है। इसके लिए उन्होंने मेरे कब्जकी ही चिकित्सा आरम्भ की और मेरी सारी दवाएं और इंजेक्शन बन्द करा दिये।

कब्ज दूर करनेके लिए मुझे एनिमा दिया जाता और कब्ज न हो इसके लिए उचित भोजन। भोजनमें मैं सुबह नाश्तेके तौरपर और दिनके तीन बजे एक-एक पाव गाजरका रस पीती और दोपहर-शामके भोजनमें मुझे चोकर समेत आटेकी रोटी और हरी उबली तरकारियां मिलतीं।

इतने हीसे मुझमें शक्ति आयी और मैं सुबह-शाम टहलने लगी।

महीना बीतते-बीतते मैं सुबह दो मील और शामको भी दो मील टहल लेती। टहलनेमें मेरे साथ आरोग्य-मंदिरमें चिकित्सा कराने आयी कई बहनें होतीं, जिससे टहलना सुगम हो जाता और टहलनेका आनंद बहुत बढ़ जाता।

केवल इस भोजन परिवर्तन और टहलनेसे मुझे अपने आप सुबह-शाम दोनों वक्त शौच होने लगा। तो फिर सुबह-शाम टहलने जानेसे पहले मैं पांच मिनटके लिए कटिस्नान भी लेने लगी जिससे शरीर नवीन होता-सा लगा और स्फूर्ति खूब बढ़ गयी। नींद गहरी हो गयी।

एक महीने बाद मुझे सुबह फलके साथ दूध भी दिया जाने लगा। दूध लेकर ही मैंने जाना कि, थोड़ा-सा दूध कितना पुष्टिदायक है।

मैं आरोग्य-मंदिरमें ढाई मास रही, वजन केवल दो किलो बढ़ा, पर मेरी त्वचाकी रंगत बदल गयी, चेहरा जो कलांसा था, भर कर रक्तिम हो गया। और, मेरा स्वास्थ्य जो अब बढ़ना शुरू हुआ है, वह बढ़ता ही जायेगा।

मैंने रोगमुक्त होकर और स्वस्थ रहनेकी कला सीखकर आरोग्य-मन्दिरसे विदा ली और अब जब भी आरोग्य-मन्दिर और उसके संचालक मुझे याद आते हैं; मेरा मस्तक उनके प्रति श्रद्धासे नत हो जाता है।

संचालकके प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करनेको कभी मुझे शब्द नहीं मिले इसलिए हमेशा मूक रही और मूक ही आरोग्य-मन्दिरसे चली आयी। जिस स्नेहसे उन्होंने मेरी चिकित्सा की, बराबर उत्साह बढ़ाया, प्राकृतिक चिकित्साके सिद्धांत समझनेमें मेरी मदद की इसके लिए मैं उनकी कितनी कृतज्ञ हूं, यह मेरे चुप रहनेपर भी कोई भी आसानीसे समझ सकता है।

—श्रीमती अंजली देवी

: ५ :

पिंडलीका दर्द

मेरी उम्र ५२ साल है, ऊंचाई ६ फुट, वजन ८१ किलो। पेशा काश्तकारी और पहलवानी। बदन गठा हुआ, ताकतसे भरपूर! आप समझ सकते हैं कि, मेरा रोबदाब क्या होगा? पर, सन १९७९ की बात है, मेरी पिंडलियोंमें दर्द शुरू हो गया और जल्द इतना बढ़ा कि, चलना मुश्किल हो गया। कहां मैं मीलोंकी दौड़ लगाता था, अब मील भर चलने-के बाद दर्द शुरू हो जाता, ऐसा कि, जल्द ही मुझे बैठ जाना पड़ता, कुछ देर आराम करनेके बाद ही मैं फिर चल पाता।

डाक्टरोंमें मेरी रसूक कम नहीं है, फिर मेरे चाहनेवाले भी अन-गिनत हैं। डाक्टरोंको मैंने दिखलाया अपनी मुश्किल बतलायी। उन्होंने मेरी कठिनाई ध्यानसे सुनी-समझी, तरह-तरह से जांच की और करायी; पर किसीकी समझमें रोग नहीं आया। बहुत भटक लेनेके बाद मैं दिल्लीके एक बहुत बड़े डाक्टरसे मिला। उन्होंने मेरे खून, थूक, पेशाब, पाखानेकी बीसियों तरहसे जांच करवायी। वक्त एक हफ्तेका लगा और खर्च हुए सात सौ रुपये। डाक्टरने जांच देखी; पर नुस्खा नहीं लिखा। इसके बदले पांच रुपये के स्टाम्प पर यह लिखकर देनेको तैयार हो गये कि, "मुझे कोई रोग नहीं है? मेरा यह सिर्फ वहम है कि, मुझे दर्द है।" मुझपर तो गाज ही गिर पड़ी। क्या मैं समझ लूं कि मुझे इस दर्दके साथ ही जीना है और पंगु रहकर रहना है? और, निराशासे पैदा हुआ मेरे दिलका दर्द! उसे तो अल्लाह-परवर-

दिलदार ही समझ सकता है ? और, ये डाक्टर उसके बंदे किसी दर्दको नहीं समझ सकते।

अब मैंने आखिरी इलाजके तौरपर कुदरती इलाज आजमाने की सोची। मैंने सुन रखा था कि, यह इलाज बढ़िया तौरपर आरोग्य-मंदिरमें होता है। वहांसे तंदुरुस्ती हासिल कर लौटे कई दोस्तोंने मुझे उसका ब्यौरा भी दिया था; पर जो सुना था, उसपर से यह इलाज करानेकी हिम्मत नहीं होती थी। पर, मरता क्या न करता। मैं इलाज-के लिए 'आरोग्य-मंदिर' पहुंच गया। जगह पसंद आयी। डाक्टर साहबने वहां मेरे दर्दकी बात सुनी; पर किसी तरहकी परीक्षा नहीं की, न किसी परीक्षाका पर्चा देखनेको तैयार हुए। वे मेरे रहन-सहनके बारेमें पूछते रहे। क्या खाता हूं, क्या पीता हूं, कब सोता हूं, कहां सोता हूं, कब उठता हूं। क्या और कितनी मेहनत करता हूं। मैं उन्हें बताता रहा और वे अपने हिसाबसे मेरे बतायेका अर्थ लगाते रहे और अंतमें उन्होंने कहा कि 'आप एक हफ्तेमें यहांसे चंगे होकर चले जायेंगे।' डाक्टर साहबकी बात सुनकर यह तसल्ली तो हुई कि, उन्होंने मेरे दर्दको 'दर्द' मान लिया; पर एक हफ्तेमें मैं चंगा हो जाऊंगा और फिर दौड़ने लगूंगा, इसपर विश्वास नहीं हुआ।

खैर ! मैं इलाज कराने आया था, इलाज शुरू हुआ। सुबह-शाम मुझे कटि-स्नान लेकर टहलनेको बताया गया। सुबह नाश्तेमें चार संतरे मिले। दस बजे पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी आध घंटे रखनेके बाद एनिमा दिया गया।

दोपहरको खाना मिला, सूखी रोटियां और उबली सब्जी। देखकर आंखोंमें आंसू आ गये। कहां डेढ़पाव घीमें बना पूरा मुर्गा और कहां यह उबली सब्जीका सालन ! अल्लाहको यादकर मैंने खाना शुरू किया। इतनेमें डाक्टर साहब मेरी मेजपर आ गये और बोले "एक रोटी खाने-में दस मिनट लगाना है। घड़ी देख लें, दस मिनटसे पहले रोटी खतम

हो जाये, तो जब तक दस मिनट पूरे न हो जायें दूसरी रोटी शुरू न करें। यह जल्दी-जल्दी खानेके लिए अपनेको आपकी दी हुई सजा होगी।" खैर मैंने खूब चवा-चबाकर खाना शुरू किया। कहां मैं डेढ़ पाव आटेकी रोटियां खा जाता था, पर यहां चार रोटी खाकर ही संतुष्ट हो गया। शायद यह रोटी ठीक तरह चबानेका फल था।

रातको सोया तो बड़ी गहरी नींद आयी, पेट सवेरे खुलासा साफ हुआ। इसके वाद कटिस्नान लेकर टहलने निकला, तो पैरोंमें फरहत मालूम हुई।

तीसरे दिन मुझे भाप-नहान दिया गया, तो उसके बाद मेरे पैरोंका दर्द आधा चला गया। वड़ा संतोष हुआ और सच मानिए सात दिनमें नहीं छह दिनमें ही मैं विल्कुल ठीक हो गया। अव मुझे डाक्टर साहवने वताया, "मैं मांसाहार छोड़ दूं और नाश्तेमें फल-दूध, दोपहर-शाम रोटी-सब्जी और थोड़ा घी लेता रहूं।" जो मैं लेता हूं और तंदुरुस्त हूं।

आरोग्य-मंदिरमें मेरा वजन छह दिनमें छह किलो घटा था। फिर अगले २४ दिनमें चार किलो और घटा। इस तरह मेरा वजन ७१ किलो हो गया। जो इस सादे भोजन पर कायम है।

—श्री हाजी मकसूद

: ६ :

रीढ़का दर्द

मैं सन् १९७० से एक ऐसे रोगका शिकार बना, जो मेरे लिए अभिशाप बन कर आया। मेरी रीढ़की हड्डीमें दर्द रहने लगा, जो बढ़ता और घटता रहता था। महीनेमें एक बार कभी-कभी दो-दो बार असह्य पीड़ा उठती थी, जो रीढ़से होते हुए ऊपर गर्दन और पूरे सिरमें व्याप्त हो जाती थी। ऐसी हालतमें मुझे बिस्तर पर चार-पांच दिनोंतक बेबस हो पड़ जाना पड़ता था। डाक्टर आते थे। दवा चलती थी। फिर, कहीं जाकर यह रोग दबता था। इस रोगके लिए मैंने अच्छे-से-अच्छे डाक्टरोंकी चिकित्सा करायी। आरम्भ एलोपैथिक चिकित्सासे किया, फिर आयुर्वेदिक, फिर होमियोपैथिक। एक्सरे लिये गये। खूनकी जांच हुई। चिकित्सा चलती रही; पर लाभ क्षणिक रहता—वह भी जब तक दवा लेता रहता। कोई कहता था, आपको सर्विकल स्पानडलोसिस है। कोई रीढ़की अंगूठियोंका सट जाना बताता था। कोई आंखकी खराबीके कारण यह दर्द बताता था। कोई कहता था कि, गलेके जोड़ सट गये हैं। 'मुंडे-मुंडे मतिर्भिन्ना' वाली कहावत चरितार्थ हो रही थी। नयी-नयी और कीमती दवाइयोंकी आजमाइश हो रही थी। अटकल-बाजियां चल रही थीं और फायदेके नाम पर, वही सब 'धान साढ़े बाइस पसेरी'।

ऐसे मेरा स्वास्थ्य बचपनसे ही काफी अच्छा रहा है। कुश्ती, कसरत और खेल-कूद ही मेरा जीवन था। कालेजके दिनोंमें एन० सी० सी० कैडेट भी रहा। और, प्रथम बार २६ जनवरी, १९५४ को दिल्ली-

परेडमें बिहारका प्रतिनिधित्व कर अखिल भारतीय प्रतियोगितासे विजयश्री लाया था। फुटबाल और वालीवालमें मेरी शुरू से ही रुचि थी। गोला फेंकने, चक्का फेंकने, भाला फेंकनेमें मैंने महारत हासिल की थी। हमेशा इनमें चैम्पियन होता रहा। परन्तु, १९७० से यह दर्द मेरे ऊपर जो हावी हुआ तो सब छूट गया। जनवरी १९७७ में मैं एक योगाचार्यकी शरणमें गया, जिन्होंने मुझे कई आसन सिखाये और उसे निरन्तर करते रहनेका निर्देश दिया। इन आसनोंसे मुझे आशातीत लाभ हुआ और करीब ४०% मेरा रोग दूर हो गया।

'आरोग्य'का मैं बराबर अध्ययन करता था। एक दिनमें अपने दो अभिन्न मित्रों श्री राजकिशोर और श्री लक्ष्मण प्रसादके साथ बैठा बातचीत कर रहा था। चर्चाका विषय था 'आरोग्य-मन्दिर गोरखपुरकी जीवनदायिनी क्षमता'। उसी दिन अचानक ही हम तीनोंका प्रोग्राम बन गया और तीसरे दिन याने १६ सितम्बर १९७७ को हम लोग अपने निर्दिष्ट उद्देश्य की ओर रवाना हो गये। १७ सितम्बर को हम लोग गोरखपुर पहुंच गये। सुबहमें डाक्टर विट्ठलदास मोदीकी कृपासे हमलोगोंको एक चार बेडका कमरा मिल गया और उसी दिनसे हमलोगोंकी प्राकृतिक दवाका शुभारम्भमें हो गया—डाक्टर मोदीका चिकित्सालय भिन्न-भिन्न प्रान्तोंके भिन्न-भिन्न भाषाभाषियोंसे और भिन्न-भिन्न रोगोंके ग्रस्त व्यक्तियोंसे खचाखच भरा हुआ था। यह हम लोगोंका सौभाग्य ही था कि, उसी दिन खाली हुआ एक कमरा मिल गया।

प्राकृतिक छटासे घिरे चिकित्सालयके शान्त और नीरव वातावरणने हम लोगोंके मन पर एक अमिट छाप डाली। चिकित्सा आरम्भ हो गयी—ऐसी चिकित्सा जिसके लिए हम लोगोंने कभी सोचा भी न था। उबली हुई सब्जी और मोटे आटेकी रोटी! दवाके नाम पर मिट्टीकी पट्टी, ऐनिमा, वाष्पस्नान, शीतल जल-स्नान और धूप-स्नान। इन चीजोंकी तो कल्पनाकी थी; पर उबली-सब्जी और चोकर समेत रोटी

पर लाचारी थी। आप स्वयं सोच सकते हैं, जिसको चटपटे खानेमें महारत हासिल हो, खाने-पीनेका शौकीन हो, उसे इस तरहके भोजन-की ओर देखनेकी भी कल्पना कैसे हो सकती है। खानेकी तो बात ही और है।

सच कहूं साहब—शुरु-शुरुमें मनने विद्रोह किया—इस अनजान व्ययस्थाकी, और मन हुआ कि, स्थान छोड़ चुपकेसे भाग जायें। परन्तु, दिलके कोनेमें स्थित अच्छाईने चुपकेसे कहा कि, यह तो ऐसा ही होगा कि, 'आये थे हरिभजनको ओटन लगे कपास'। खैर साहब ! लाभकी कल्पनासे मन मसोस कर वहां रुक जाना पड़ा। तीसरे दिनसे ही इस भोजनमें रुचि उत्पन्न हो गयी और एक सप्ताह तक यही क्रम चलता रहा। सांतवां दिन अच्छी तरह व्यतीत हुआ; परन्तु रातमें मेरे ऊपर आफतने धावा बोल दिया। ठंढ लगने लगी, ऐसी ठंढक कि, अपना तो अपना सभी साथियोंका विस्तर तक मुझे ओढ़ाया गया; परन्तु ठंडक शान्त नहीं होनी थी और नहीं हुई। इसके साथ ही जोरोंका बुखार आया। और, शरीर दर्दसे छटपटा उठा। मैं और मेरे साथी (क्योंकि मेरे ही कारण उन्हें काफी कष्ट उठाना पड़ रहा था) उस क्षणको कोसने लगे, जब हम-लोगोंने आरोग्य मन्दिर आनेका फैसला किया था। उस रात किसी-को नींद न आयी। सभी मेरी सेवामें रहे। राम-राम कर रात कटी-सुबह हुई। सुवह वरदान दे गयी। ऐसा अनुभव होने लगा कि, रातमें दुःस्वप्न देखा था—न बुखार, न दर्द, आश्चर्य? ९ बजे डाक्टर साहब आये, उनसे मैंने इस घटनाकी चर्चा की, तो उन्होंने कहा कि, आप भाग्यशाली हैं।' यह सुनते ही सारे शरीरमें आगकी लहर फैल गयी। परन्तु, मैंने धीरजका साथ न छोड़ा, शान्त रहा। फिर भी मैंने पूछ ही लिया "डाक्टर साहब, मुझे सान्त्वना देना तो दूर रहा, आपने व्यंग-बाणोंकी वर्षा आरम्भ कर दी।"

हंसते हुए डाक्टर मोदीने कहा—"शर्मा जी इस बुखारको लानेके

लिए हम लोग रोगियोंको उपवास तक कराते हैं। आप भाग्यशाली इसलिए हुए कि, उबली चीजें खाते-खाते ही आपको उभार आ गया। इस उभार का अर्थ है कि, शरीर अन्दरके विजातीय द्रव्योंको बाहर निकालनेके लिए तत्पर हो गया है।" मुझे आत्मग्लानि हुई और मैंने उनसे क्षमा मांगी-अपने कर्णकटु शब्दोंके लिए।

उन्मुक्त हंसीके साथ ही डाक्टर साहबने कहा "आपको क्षमा तो नहीं, सजा अवश्य मिलेगी।" जानते हैं—वह सजा क्या थी ? मेरा उसी दिनसे खाना बन्द कर दिया गया—याने उपवास शुरू हो गया—शरीर-शुद्धिकी क्रिया।

मेरा उपवास २१ दिनों तक चला। उपवासकी अवधिमें सिर्फ नीबू-पानी लेता। तीन दिनों तक मुझे कुछ कमजोरी महसूस हुई। चौथे दिनसे नयी स्फूर्ति आती महसूस हुई। मैंने उपवासकी अवधिमें कभी यह अनुभव ही नहीं किया कि, मैंने भोजन नहीं किया है—और न खाने-की कभी इच्छा ही हुई। हालांकि, मेरे साथी श्री राजकिशोर और लक्ष्मणजी मेरे समक्ष ही फलाहार करते थे। जैसे-जैसे उपवासकी अवधि लम्बी होती गयी, शरीर हल्का प्रतीत होता गया और अन्दर एक अजीब आनन्दका सृजन होता रहा। उपवासके दिनोंमें प्रातः और शाम तीन-तीन किलो-मीटर टहलना भी साथ था। २२-वें दिन मेरा उपवास तोड़ा गया, भोजनसे नहीं; बल्कि आधा ग्लास मोसम्मी रस और आधा ग्लास पानी मिलाकर—यही क्रम करीब सात दिनों तक और चला। फर्क सिर्फ इतना था कि, उपवास तोड़नेके दूसरे दिनसे दिनमें तीन बार एक-एक ग्लास मोसम्मीका रस लेता था तीसवें दिन रातमें एक रोटी और उबली सब्जीका रसा था। इन तीस दिनों तक नित्य एनिमा लगाया जाता था और कुछ-न-कुछ मल निकलता ही रहा। ३१-वें दिन जैसा एनिमाका पानी था वैसा ही निकला—उसी दिन डाक्टर मोदीने यह फतवा दे दिया कि, "अब आप बिलकुल अच्छे हो गये।" पेट पूरी

तरह स्वच्छ हो गया। आरोग्य-मन्दिरसे लौटे आज पूरे दो वर्ष हो गये। डाक्टर मोदीकी चिकित्सा और उनके व्यक्तित्व और उत्तम निर्देशका फल यह हुआ कि, अभी तक कभी सिर दर्द तक नहीं हुआ है। आरोग्य-मन्दिरमें उपस्थित होते समय मेरा वजन ११० किलोग्राम था और वहां-से लौटते समय ८७ किलोग्राम याने २३ किलोग्राम मेरा वजन घट गया था। वहांसे लौटने पर महीनों तक मेरा आहार करीब-करीब वही रहा। अब मैं पूर्णतया निरोग हूं और स्वस्थ हूं।

मैं जीवन भर डाक्टर मोदी और गोरखपुरका आभारी रहूंगा, जिन्होंने वर्षोंकी बीमारी शरीरसे दूर कर दिया। मेरे दोनों मित्रोंका भी स्वास्थ्य पूर्णतया ठीक है और वे भी बहुत-बहुत आभारी हैं।

प्रकृति और प्राकृतिक साधनोंसे दूर रह कर मनुष्य रुग्णावस्थाको प्राप्त होता है। यदि हम प्राकृतिक जीवनको जीवनका अंश बना लें, तो दीर्घायु होकर विश्व-कल्याण करते रहें।

—श्री बांके बिहारी शर्मा

: ७ :

सर-दर्द

१९५५ में जब मैं विश्वविद्यालयमें पढ़ता था, मेरे सिरमें दर्द रहने लगा। दर्द माथेसे शुरू होता था बढ़ता ही चला जाता था। लगने-लगता कि, सिर फटा जा रहा है और टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा। यह दर्द शुरूमें १५-२० दिन पर होता था। पर, बादमें जल्द-जल्द होने लगा। और, १५ साल बीतते-बीतते हालत यह हुई कि, दर्द बराबर बना रहने लगा। दर्द रहते मैंने पढ़ा भी और नौकरीमें भी लग गया। पर, जीवन बड़ा कष्टका था। नौकरी करता और सर-दर्द भोगता।

दर्द जब बढ़ता तो उल्टियां आने लगतीं। शौचकी हाजत होती। यदि पेट साफ हो जाता, तो फिर दर्द कम हो जाता।

यह न समझें कि, मैं दर्दको पालता रहा। बड़ा इलाज कराया। कई साल तक डाक्टर बदल-बदल कर होमियोपैथीकी दवा की। निराश होकर बम्बईके भारत-प्रसिद्ध श्री शिवशर्माकी शरणमें गया। उनकी बहुत महंगी और अति कड़वी दवा महीनों निगलने पर भी वही ढाक के तीन पात। कोई लाभ नहीं हुआ।

एलोपैथीकी एनासिन, नोवालजिन आदि प्रायः सभी दर्द नाशक दवाएं, उनसे होने वाले उत्तर प्रभावकी चिन्ता किये बगैर लीं। कभी थोड़े समयके लिए आराम मिल जाता और फिर दर्द,..दर्द!

लोगोंने बताया कि, मेरा दर्द नाड़ी-मंडलसे सम्बंधित है। मैं बम्बईके प्रसिद्ध न्यूरालाजिस्ट डाक्टर वाडियाके पास गया। उन्होंने मेरी परीक्षा की। कुछ आवश्यक परीक्षण कराये और अंतमें बताया कि,

मेरे लिए कोई दवा है तो 'कैफरगाट'। इसका ५ साल तक मैं सेवन करता रहा। इसका भी प्रभाव यही दिखा कि, थोड़ी देरके लिए दर्द चला जाता। बादमें तो इसकी शक्ति भी क्षीण होने लगी। अब यह दवा मेरे लिए बेकार हो गयी।

मैं फिर डाक्टर वाडियासे मिला तो उन्होंने कहा कि, "आपकी मुख्य दवा तो वही है। पर, यदि कोई आपका परिचित विदेशमें हो तो मैं जो दवा लिखूं, मंगा लें। और, उसे आजमा कर देखें।" विदेशमें मेरा कोई परिचित न होनेसे. मैं उस दवाके प्रयोगसे वंचित रह गया।

इसके कुछ समय बाद मुझे स्वयं १९७६ में ब्रिटेन जानेका अवसर मिला। मैंने वहां भी न्यूरालाजिस्टसे सम्पर्क किया। उन्होंने भी मुझे वही दवा बतायी जो मैं भारतमें डाक्टर वाडियाकी सलाह पर खाता था। इसके अतिरिक्त उन्होंने एक और दवाका परामर्श दिया और कहा कि, "यदि 'केफरगट'का प्रभाव न होता हो, तो इसे लेकर देखें। इसके साथ ही यह भी कहा कि, ६ महीने लगातार प्रयोग करनेके बाद ही दवाकी लाभहानिकी जानकारी हो सकेगी।" अपने ३ महीनेके प्रवास-कालमें मैंने उसका लगातार प्रयोग किया; पर उसके बावजूद मैं दर्दसे परीशान रहा।

मेरे दर्दकी कहानी इस प्रकार समझें कि, मुझे चीफ इंजीनियर होनेके अवसर आये; पर इस दर्दके ही कारण मैं उसे नकारता गया।

भारत लौटनेपर मैं 'आरोग्य' का पाठक हो गया और उससे प्राकृतिक चिकित्सामें मेरी आस्था बढ़ी। और, मुझे यह विश्वास होने लगा कि, मैं प्राकृतिक चिकित्सासे ठीक हो जाऊंगा। अतः, मैंने भारतके इस सर्व-श्रेष्ठ प्राकृतिक चिकित्सालयसे पत्र-व्यवहार किया। वहांसे अनुमति मिलते ही मैं मई १९७७ में आरोग्य-मंदिरमें भरती हो गया।

यहां मात्र ४० दिनकी चिकित्सासे मेरा दर्द बिल्कुल ही चला गया। यहां मेरी चिकित्सा थी; प्रातः-सायं कटिस्नान या मेहन-स्नान। उसके

बाद में घूमने चला जाता। आरोग्य-मंदिरके चारों ओर बड़ा मनोरम दृश्य है। मैं मीलों टहलता। लौटकर फल और दूध नाश्तेमें लेता। फिर श्री मोदी जी ६ वजेके लगभग रोगियोंको देखने आते और चिकित्सा-लिखते। इन चिकित्साओंमें तो मुझे नानाविध चिकित्सा मिली; पर मुख्य थी रीढ़-स्नान। पित्त निकालनेके लिए जल-धौति भी करायी जाती। कुछ योगासन भी मैंने आरोग्य-मंदिरमें सीखे।

मैंने अपने चिकित्सा-काल में न उपवास किया और न खाली फलाहार।

दो साल हो गये। मैं विल्कुल चंगा हूं। मैंने यहां प्राकृतिक जीवन सीख लिया है। उसीके अनुसार भोजन और दिनचर्याका निर्वाह करता हूं। दो सालमें एक पैसेकी भी दवा नहीं खायी।

—श्री सुरेन्द्र कुमार वैश्य

: ८ :

मोटापा

मेरी पत्नी श्रीमती कमलादेवीका जब विवाह हुआ था, तो उनका शरीर बहुत ही सुन्दर और सुडौल था। पर, विवाहके दस वर्ष बाद उनका वजन बढ़कर ८१ किलो हो गया और सारी सुन्दरता नष्ट हो गयी। घरके काम करना तो संभव ही नहीं रह गया था। जीवन भी दूभर हो गया था। जोड़ोंमें दर्द होता रहता और जब सोतीं तो जोरोंसे नाक बजती और बेहद कमजोरी महसूस होती थी। इन सब कारणोंसे मैं बहुत परीशान था।

मैंने प्रचलित सभी चिकित्सापद्धतियोंके शीर्ष-चिकित्सकोंकी सलाह ली। उनकी चिकित्सा करवायी; पर कोई भी चिकित्सापद्धति मेरी पत्नीका वजन कम करनेमें कारगर सिद्ध नहीं हुई।

मेरे एक मित्रने बताया कि, 'वजन कम करनेके लिए श्रीमती कमलादेवीको आरोग्य-मंदिर ले जाओ'। मैंने आरोग्य-मंदिरसे पत्र-व्यवहार किया और आश्वासन मिलनेपर कमलादेवीको आरोग्य-मंदिर ले गया। आरोग्य-मंदिर में अपनी पत्नीको २४ जून ७८ को पहुंचाया था। वहां चिकित्सकने मुझसे कहा कि, "इन्हें यहां दो महीने जरूर रहना चाहिए।" तो उनकी इच्छानुसार मैंने अपनी पत्नी को २३ अगस्त ७८ तक रखा। इस दो महीनेमें उनका वजन ८१ किलोसे घटकर ६४ किलो हो गया। अर्थात् १७ किलो कम हुआ।

मैं जब आरोग्य-मंदिर अपनी पत्नी को पहुंचाने गया था तो एक सप्ताह तक वहां रहा था। इस बीच मैंने देखा कि, मरी पत्नीको सुबह-

शाम एक-एक घंटेके लिए टहलनेको भेजा जाता है और चिकित्सामें उन्हें कभी मालिश दी जाती, कभी सारी बदनकी गीली पट्टी तो कभी सारे शरीरका वाष्प-स्नान। भोजनमें उन्हें सुबह फल और दोपहर शाम रोटी-सब्जी दी जाती।

एक सप्ताहमें ही उनके जोड़ोंका दर्द दूर हो गया, हल्कापन महसूस करने लग गयीं और आरामसे टहलने-घूमने लगीं।

ऊपर मैं बता चुका हूं कि, मेरी पत्नी दो महीने आरोग्य-मंदिरमें रही थीं और उस अवधिमें उनका १७ के0 जी0 वजन कम हुआ था। फिर घर आकर भी वह दो महीनेतक वही भोजनक्रम और टहलना-घूमना चलाती रहीं और अगले दो महीनेमें उनका वजन ६४ के0 जी0 से घटकर ५७ के0 जी0 हो गया। अब भोजन सामान्य हो गया; पर मसाले वह अब भी बिल्कुल नहीं लेतीं, न दाल-चावल, न चीनीका ही व्यवहार करती हैं। नित्य सुबह-शाम एक-एक घंटे टहलती हैं।

पहलेका उनका ढीला-ढाला शरीर अब चुस्त और सुडौल हो गया है। सारी तकलीफें चली गयी हैं, नाकका बजना ठीक हो गया है और घरके सभी काम आरामसे कर लेती हैं। कोई तकलीफ नहीं होती। मेरी पत्नीकी भद्दी, बेडौल देह अब खूबसूरत लगने लगी है।

अबतक मैंने किताबोंमें कायाकल्पकी बात पढ़ी थी, धार्मिक लोगोंसे सुना भी था; पर देखनेका मौका नहीं मिला था। वह आरोग्य-मंदिरमें देखनेका मौका मिला और समझमें आया कि, प्राकृतिक चिकित्सा ही कायाकल्पकी विधि है। इसीके द्वारा कायाकल्प किया जा सकता है।

मैं स्वयं होमियोपैथ डाक्टर हूं। २५ वर्षसे लोगोंका उपचार होमियोपैथीसे करता आ रहा हूं। पर, प्राकृतिक चिकित्सासे प्रभावित होकर मैंने प्राकृतिक चिकित्साके साहित्यका अध्ययन किया है और अब अधिकतर लोगोंको प्राकृतिक जीवन अपनानेकी ही राय देता हूं।

यह कहानी मैं बहुत पहले ही लिख देता; पर मुझे संदेह था कि,

कहीं मेरी पत्नीका मोटापा वापस न आ जाये। बराबर उनका निरीक्षण करता रहा और जब संदेह दूर हो गया तो कहानी लिख रहा हूं।

प्राकृतिक चिकित्सा इतनी सरल है कि, इसे साधारण बुद्धिका आदमी भी सीखकर लोगोंका कल्याण कर सकता है। भारतके लिए तो एक मात्र प्राकृतिक चिकित्सा ही सर्वसुलभ, सरल और हितकर चिकित्सा पद्धति है।

—डा० रामनरायण सिंह

: ६ :

अल्सर

बात सात बरस पहलेकी है। मुझे एकाएक पेटमें दर्द शुरू हुआ और जलन होने लगी। रातको नींद खुल जाती और कष्टके कारण उठकर बैठ जाना पड़ता। ऐसी अवस्थामें मैंने स्थानीय वैद्योंसे जांच करवायी और उनकी दवा लेने लगा। एकसे लाभ न होने पर दूसरे वैद्यकी दवा ली और इस तरहसे एकके-बाद-एक करके अनेक वैद्योंसे उपचार करवाये तथा दवा और कष्टके साथ दो वर्ष गुजारं दिये। फिर, एक निकटके अस्पतालमें जाकर एक्सरे करवाया, तो मालूम हुआ कि, 'ड्यूडनल अल्सर' है। बात समझमें आयी और डाक्टरोंसे इलाज करवाना आरंभ किया। दवा शुरू करने पर लाभ होता-सा मालूम हुआ; पर फिर हालत ज्यों-की-त्यों हो गयी; लेकिन दवा करता रहा। स्वास्थ्य मेरा बराबर गिरता जा रहा था, जीवनके प्रति उत्साह कम हो गया था, मानसिक स्थिति चिंतनीय हो गयी, स्त्री, बच्चे और परिवारके लोग अच्छे नहीं लगते। समझमें नहीं आ रहा था कि, क्या करूं? इसी तरहसे दो वर्ष और बीत गये। एक दिन बाजारमें एक अखबार-विक्रेताके पास, 'आरोग्य, नामकी पत्रिका दिखायी दे गयी। पत्रिका का नाम 'आरोग्य' पढ़कर मैंने अंदाज किया कि, यह स्वास्थ्य-संबंधी पत्रिका होगी। अतः उसे खरीद ली। पढ़ा तो ज्ञात हुआ कि, इसका तो मार्ग ही दूसरा है। इसमें स्वस्थ होनेके लिए दवाकी नहीं, स्वास्थ्यके नियमों पर चलनेकी बात कही गयी है। बात समझमें नहीं आयी तो, मैंने 'आरोग्य' के सहारे आरोग्य-मंदिर का पता पाकर वहांके व्यवस्थापकसे पत्र-व्यवहार

किया। अपने, रोगका विवरण दिया। वहांसे यह आश्वासन प्राप्त होने पर कि, आप पूर्ण रूपसे अच्छे हो जायेंगे, आरोग्य-मंदिर चला गया। आरोग्य-मंदिरका स्थान, उसके चारों तरफ फैले खेत, वगीचे और आरोग्य-मंदिर को देखकर चित्त प्रसन्न हो गया। आरोग्य-मंदिरमें आये लोगोंसे मिला, जो मेरी ही तरह दवा लेकर हताश प्राणी थे; पर उन सबके मनमें उमंग भरा था। यह देखकर मेरे मनमें भी यह विश्वास हुआ कि, मैं भी अवश्य ही पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त करूंगा। वहां के चिकित्सक से मिला। मेरे स्वास्थ्यकी उन्होंने परीक्षा की और मेरी चिकित्सा आरंभ हुई। चिकित्सामें मुझे सुवह-शाम दस-दस मिनटका कटिस्नोन देकर टहलनेको भेजा जाता और दिनके नौ बजे आध घंटेके लिए पेड़ू पर मिट्टी रखी जाती और उसे हटानेके बाद एनिमा देकर पेट साफ किया जाता।

भोजनमें सुबह नाश्तेमें खूब पका केला और दूध दिया जाता। दोपहरको चोकर समेत गेहूंके आटेकी रोटी और उवली सब्जी। सब्जी में मिर्च-मसाले तो होते ही नहीं; नमक भी नहीं डाला जाता। मैं शुरू-में थोड़ा नमक लेता था; पर धीरे-धीरे जब यह ज्ञात हुआ कि, स्वा-भाविक रीतिसे बनायी सब्जीका अपना एक अलग स्वाद होता है और नमककी जरूरत नहीं है, तो नमक भी छोड़ दिया। इस भोजनपर चलने-से एक सप्ताह के अंदर पेटका दर्द समाप्त हो गया और १५ दिन बीतते-न-बीतते जलन भी वंद हो गयी। मेरी मानसिक स्थिति भी सुधरी और मैं अपनेको स्वस्थ महसूस करने लगा। इसी भोजनपर आरोग्य-मंदिरमें दो महीने रहा।

आगे चलने पर चिकित्सा बढ़ायी गयी। वाष्प-स्नान दिया गया, सारे शरीरकी गीली पट्टी भी दी गयी और समय-समय पर मालिश दिया गया, जिससे शरीर तगड़ा हो गया।

आरोग्य-मंदिरमें दो महीने रहनेके बादमें घर आया। घर आते

समय मैंने आरोग्य-मंदिरको प्रणाम किया, उसी तरह प्रणाम किया, जिस तरह लोग देवता को प्रणाम करते हैं। मैंने यहां स्वास्थ्य प्राप्त किया था, इस पर मेरी अपार श्रद्धा थी।

आरोग्य-मंदिरसे लौटे मुझे आज तीन वर्ष हो रहे हैं, मैं पूर्णरूपसे स्वस्थ हूं और घरमें कोई बीमार होता है, तो उसकी चिकित्सा स्वयं करके स्वस्थ कर लेता हूं। मैंने कटिस्नानके लिए टब, पेटकी सेंकके लिए रबरकी थैली और एनिमा-यंत्र रख लिया है। गांव वाले भी जान गये हैं कि, मैं रोगियोंके सहायता कर सकता हूं, तो वह लोग भी आने लग गये हैं। उनकी भी सहायता करता हूं और अब तक छोटे-मोटे रोगियों की तो कोई बात ही नहीं है, १०-१५ ऐसे रोगी अच्छे किये हैं, जिनको डाक्टर-वैद्योंनें जवाब दे दिया था। अभी एक छह वर्ष की लड़की, जिसके शरीरका अधिकांश भाग जल गया था, स्थानीय डाक्टरकी चिकित्सासे लाभ न होनेपर उसके डाक्टरने यह राय दी कि, लड़कीको काठमांडू या किसी भारतीय अस्पतालमें ले जाकर बड़े डाक्टरसे इलाज कराओ। पर, लड़कीके बापकी हैसियत ऐसी नही थी कि वह काठमांडू ले जाता या अन्य किसी डाक्टरकी सहायता प्राप्त कर सकता। वह लाचार मेरे पास ले आया। लड़कीके नापका एक काठका टब बनवाकर उसमें ठंढा पानी भरकर मैं आध घंटेके लिए लड़कीको लिटाता और जहां-जहां घाव गहरे थे, वहां-वहां खूब गूंथी ठंढे पानीसे भीगी मिट्टी रखवाता। भोजनमें बिना नमक-मिर्चकी हरी उबली सब्जी और चोकर समेत गेहूंके आटेकी रोटी देता। वह डाक्टर जिन्होंने पहले बच्चीको चिकित्सा की थी, बराबर उसके बापको डरवाते रहते कि, मिट्टीसे टिटनेस हो जायेगा। पर, धीरे-धीरे मेरी चिकित्सासे बच्ची ठीक हो गयी और आज वह पूर्णतः स्वस्थ है। इस तरह प्राकृतिक चिकित्सासे मुझे स्वास्थ्य तो मिला ही, ब्याजके रूपमें वह ज्ञान भी मिला, जिसके आधारपर मैं लोगोंकी चिकित्सा भी कर लेता हूं। ऐसी, कौन-सी चिकित्सा होगी, जो आदमीको रोगमुक्ति प्रदान करनेके साथ-साथ चिकित्सक भी बना देती हो।

—श्री नर बहादुर खांड

गैस्ट्रिक अल्सर

मेरा जन्म २२ जुलाई १९०८ को हुआ था। यह मेरा ६१-वां साल चल रहा है। मुझे सन् १९४५ से ही प्राकृतिक चिकित्सामें रुचि रही है और १९५६ तक मैं 'हाबी' के रूपमें प्राकृतिक-चिकित्साद्वारा दूसरोंकी चिकित्सा करता रहा हूं।

लगभग ३ वर्ष पूर्व एलोपैथिक चिकित्सकोंने मुझे 'गैस्ट्रिक-अल्सर' बता दिया। यह निदान सुनकर भी मैंने एक दिन भी दवा नहीं खायी। मैं लुधियाना-स्थित, क्रिश्चियन मेडिकल कालेज तथा अस्पतालका कानूनी सलाहकार हूं। यह एक मानी-जानी संस्था है तथा चिकित्साके सभी सर्वाधुनिक उपकरण यहां उपलब्ध हैं। वहां चिकित्साके लिए मुझे पूरी सुविधा थी; पर मैं वहां एक दिन भी न दवा के लिए गया और न सलाहके लिए। इस पेटके तथाकथित शिकायतके अतिरिक्त लगभग १ वर्षसे मेरे पैरमें दर्द था और १०० गज भी चल सकना मेरे लिए कठिन था। इस पैरकी तकलीफके ही कारण मेरा सुबहका घूमना छूट गया था और मुझे शीर्षासन बंद कर देना पड़ा था। जिसको मैं विगत २० वर्षोंसे निरन्तर करता आ रहा था।

चिकित्साके लिए मुझे सबसे उपयुक्त स्थान आरोग्य-मंदिर लगा और वहांके चिकित्सक श्री विट्ठलदास मोदीकी स्वीकृति मंगाकर १ सितम्बर १९६८ को आरोग्य-मंदिर, गोरखपुर पहुंचा। आरोग्य-मंदिर-का वर्तमान भवन बड़े सुरम्य वातावरणमें बना है और जब मैं वहां गया, उस समय भी वहां नाना रोगोंवाले—आसामसे गुजराततक के—९०

रोगी थे। वहांका वातावरण बड़ा ही स्वस्थ और पारस्परिक स्नेहपूर्ण मिला।

आरोग्य-मंदिरमें मेरी चिकित्सा २-री तारीखसे शुरू की गयी और मेरे आश्चर्यका ठिकाना न रहा, जबकि, मैंने देखा कि मात्र ४ दिनोंमें ही मेरे पैरका दर्द जाता रहा और मेरी टांगें ठीक-ठीक काम करने लगीं। मेरा प्रातः सायंका घूमना पुनः शुरू हो गया और मैं ४ मील प्रतिदिन टहलने लगा। ५-वें दिन अपनेको शीर्षासन करनेके लिए सक्षम पाकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। प्राकृतिक-चिकित्सा जादूकी तरह इतनी जल्दी लाभ कर सकती है, इतने दिनोंसे प्राकृतिक-चिकित्सासे परिचित रहकर और अनेक लोगोंकी चिकित्सा करके भी मैं नहीं जान पाया था।

मेरा पैर ठीक हो गया, मेरे पेटकी शिकायत तो जाती रही, आरोग्य-मंदिरमें लगभग १ मासके आवासमें मेरा वजन भी २० पौंड घटा। कहना न होगा कि, मैं इधर मोटापेका शिकार हो रहा था और बहुत दिनोंसे वजन घटानेके लिए प्रयत्नशील था।

आरोग्य-मंदिरसे लौटकर मैं अपनेको इतना चुस्त और स्वस्थ पाता हूं कि, मैं लगभग ६ मील प्रतिदिन टहलता हूं और किसी खिलाड़ीकी तरह दौड़ सकता हूं। शारीरिक और मानसिक दोनों ही दृष्टियोंसे मेरा कायाकल्प हो गया है और ३० वर्ष पूर्वका-सा अनुभव करता हूं। लगता है कि, वृद्ध शरीरके सभी यंत्र किसीने निकालकर उसमें नये यंत्र लगा दिये हों। मेरे जीवनको एक नया जीवन मिल गया और मैं अब अनुभव करता हूं कि, अपने अगले ३० वर्ष भी मैं पूर्ण स्वस्थ ही विताऊंगा।

मेरी चिकित्सा बड़ी सीधी रही। एक सप्ताह मुझसे फलाहार कराया गया। फिर प्रातः फल और दूध नाश्तेमें तथा दोपहर-सायं रोटी-सब्जी दी जाने लगी।

फलाहार-कालमें नित्य मिट्टीकी पट्टी और एनिमा मिलता। इसके अतिरिक्त प्रातः-सायं कटि-स्नान तथा रातमें पीड़ावाले स्थानपर पानीमें भींगी पट्टी लपेटकर ऊपरसे ऊनी पट्टी लपेट दी जाती।

तथा सप्ताहमें दो दिन पूरे बदनकी गीली पट्टी, दो दिन भाप-स्नान और दो दिन मालिश मिलती।

मोदीजीके नैकट्यमें इतने दिनों रहकर मैंने मोदीजीको बड़ा सफल चिकित्सक पाया। मेरे कमरेके बगलमें पेप्टिक-अल्सर का एक रोगी था। वह दूध पी रहा था; पर उसे कोई लाभ नहीं हो रहा था। उसकी दशा देखकर एक दिन मैंने मोदीजीसे कहा—"आप उस रोगीको छुट्टी दे दीजिए। अपयश हाथ आयेगा?"

मोदीजीने उत्तर दिया—"मेरा उसपर पूरा ध्यान है। आप चार दिन और देखिए।" और, तीन दिनके बाद मोदीजीने उसका दूध बंद कर दिया और उसे सुबह फलमें आधसेर पपीता दोपहरमें दो रूखी रोटी और सब्जी देना शुरू किया। जिस दिन रोटी दी, उसी दिन उसका दर्द जादूकी तरह चला गया।

फिर एक सप्ताहके बाद उसकी फल-सब्जी आधी कर दी और सुबह फल और आधा सेर दूध तथा दोपहर-शाम रोटी, सब्जीके साथ आधी-आधी छटांक घी देने लगे। रोग तो उसका उसी दिन चला गया था, जिस दिन रोटी शुरू हुई, अब उसका वजन भी बढ़ने लगा। २ सप्ताह और ठहरकर वह मेरे सामने ही घर चला गया।

मेरे वहांके प्रवास-कालमें नाना विषयोंपर मुझसे मोदीजीसे प्रायः वार्ता हुआ करती थी। और मैंने देखा कि, मोदीजी बड़े सुलझे विचारक हैं। उनकी यह प्रवृत्ति उनके चिकित्सा-कार्यमें बड़ी ही सहायक हैं।

स्वास्थ्य और जीवनमें मोद खो देनेवाले लोगोंको मेरी सलाह है कि, वे महीने-दो-महीनेके लिए सीधे आरोग्य-मंदिर जायें और विश्वास तथा भक्तिपूवक मोदीजीके आदेशोंका पालन करें। आरोग्य-मंदिर मानवताके लिए एक वरदान है। और, उसके माध्यमसे लोगोंकी चिकित्सा करके मोदीजी स्वास्थ्यके क्षेत्रमें जो कार्य कर रहे है, वह निस्सन्देह सभी दृष्टियोंसे श्लाघ्य हैं।

—श्री विजय कुमार गुप्ता

: ११ :

गठिया

मैं केवल छह महीनेका था कि मेरी माताजी संसारसे चल बसीं। मैं जब गर्भमें था तभीसे मां अस्वस्थ थीं और मृत्युसमयतक उनका हाजमा विशेष रूपसे खराब था। एक तो कमजोरी और बीमारी मांसे विरासतमें मिली एवं दूसरे मेरा पालन-पोषण उचित ढंगसे नहीं हुआ। इन दोनों कारणोंसे ही बचपनसे ही मेरा शरीर रोगोंका घर बन गया। यह क्या कम है कि मैं आज जिंदा हूं। नहीं तो कई बार इतना बीमार हुआ कि लोग कहने लग पड़ते कि यह लड़का अब बच नहीं सकता। पर "जाको राखे साइयां, मारि सके नहिं कोय।" मैं बहुधा कमजोर ही बना रहता और पढ़ाई भी करता रहता। गांवमें वैद्योंकी ओषधियां खाता-पीता रहता था। एक तरहसे यों कहिये कि मेरा शरीर दवाकी आलमारी बना रहता था जिसमें समय-समयपर अनेक ओषधियां रखी जाती थीं।

इंटरमीडियेटकी परीक्षा देते समय भी मैं बीमार था पर तृतीय श्रेणीमें मैं पास हो गया। मैंने पढ़ना छोड़ दिया और नौकरी कर ली। अब शहरमें रहने लगा तो एलोपैथी चिकित्साके संपर्कमें आया—कोई-न-कोई बीमारी होती ही रहती थी। मासिक वेतनका एक अच्छा हिस्सा दवा खरीदनेमें खर्च हो जाता था। इस प्रकार नौकरी करते एवं ओषधियां खाते-खाते दस माह ही व्यतीत हुए थे कि अगस्त १९५८ में मेरी दोनों टांगोंमें घुटनोंके नीचे दर्द होने लगा और साथ-ही साथ पेटमें गैस बढ़ गयी और बुखार आ गया। मैंने एलोपैथी चिकित्सा करायी जिससे बुखार आदि तो न रहा पर टांगोंमें चीटियां सी रेंगती ही रहतीं।

डाक्टरने आठ-दस इंजेक्शन लगाये व गोलियां आदि खानेको दीं। इनसे टांगोंका दर्द मेरे घुटनोंमें जम गया। दोनों घुटने दर्दसे आक्रांत हो गये। चलने-फिरनेमें कठिनाई होती। यदि कुछ देर बैठकर कार्य करनेके पश्चात् उठ खड़ा होता तो टांगें अकड़कर रह जातीं तथा सीधा खड़ा होना मुश्किल हो जाता। पेट बड़ा खराव रहता। विना पाचक चूर्ण खाये खाना ही न पचता। पेट ठीक साफ न होता, बहुधा कब्ज रहता। उन दिनों तो मैं यह सोचा करता था कि न जाने लोग विना पाचक चूर्ण खायें भोजन किस प्रकार हजम कर लेते हैं। मैं पाखाना साफ लानेको बहुधा जुलाब लिया करता।

घुटनोंके दर्दसे मैं लगभग दो वर्षतक पीड़ित रहा। नौकरी भी करता रहा। कार्य दुनियाके सभी होते रहे, पर दुःखी मनसे मैंने इस दो वर्षकी अवधिमें एलोपैथिक, वैद्यक, यूनानी, होमियोपैथिक जो भी चिकित्सायें प्रचलित हैं और वैज्ञानिक समझी जाती हैं सभी करायीं, काफी खर्च किया परतु कोई लाभ नहीं हुआ। जाड़ेकी ऋतुमें दर्द सारे शरीरमें हो जाता था। पर, दवा लेनेपर फिर घुटनोंमें जम जाता। कई प्रकारके तैल जैसे महामाष तैल, महाविषगर्भ तैल आदि लगाये, बड़ी-बड़ी पेटेंट दवाइयां जैसे महाजोगराज गूगल, इरगापाइरिन, वृहत् वात-चिंतामणि रस आदि आदि खायीं। ये कुछ नाम याद रहे सो लिख दिये हैं पर न जाने क्या-क्या खाया याद ही नहीं रहा अब तो।

प्राकृतिक चिकित्साका जिसके द्वारा मेरे रोगका अंत हुआ अब तक मुझे कुछ पता नहीं था। अगस्त १९६० में आर्यसमाज-मंदिरमें एक सज्जन आये जिन्होंने बताया कि वे मिट्टीद्वारा प्रत्येक रोगका इलाज कर सकते हैं। मुझे यह सुनकर बड़ी हसी आयी, उस समय मैंने उनसे अपने रोगके बारेमें पूछा, तो उन्होंने मेरे पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी रख दी और खूब पानी पीनेको बताया। मैंने उन्हें बताया कि गठिया तो ठंढसे होता है और मिट्टी ठंढी है, इससे तो मेरा रोग बढ़ेगा ही। परंतु उन्होंने

मुझे समझा-बूझा दिया। तदुपरांत मैं प्रतिदिन एक या दो बार अपने पेड़ू पर मिट्टीकी पट्टी रखने लगा और काफी पानी पीने लगा। अन्य कोई चिकित्सा-विधि न की और न खाने-पीनेमें ही कोई रोक-टोक रखी क्योंकि उन सज्जनसे भोजनके संबंधमें कोई बात ही नहीं हुई थी। मिट्टीके प्रयोगसे दो मासमें दर्दमें कमी हुई एवं पाचन तथा मल-निष्कासनका कार्य स्वाभाविक हो गया। पाखाना साफ होने लगा और भूख भी बढ़ी। इसी बीच मैंने किसीसे सुना कि आरोग्य-मंदिरसे पत्र-व्यवहार द्वारा चिकित्सा हो सकती है। मैंने अपने रोगका संक्षिप्त ब्योरा देते हुए आरोग्य-मंदिरके संचालकसे निर्देशन चाहा। उन्होंने बड़ा आशाजनक उत्तर भेजा और "रोगोंकी सरल चिकित्सा" पुस्तक भेज दी। लिखा कि इसके गठिया लेखके अनुसार चिकित्सा अपनाओ। मैंने वह सारी पुस्तक मन लगाकर कई बार पढ़ी और उसके गठिया अध्यायके अनुसार अपनी चिकित्सा स्वयं करने लगा। मैंने तीन दिनका उपवास रखा। दूसरे सप्ताह तीन दिन रसाहार किया। तीसरे सप्ताह तीन दिन फलाहार किया। चौथे सप्ताह तीन दिन रसाहार और तीन दिन फलाहार किया। साथ-साथ एनिमाद्वारा आंतें साफ करता रहा। मिट्टीका प्रयोग भी जारी रखा। पैरोंके गरम नहानद्वारा सप्ताहमें चार-पांच बार शरीरसे पसीना भी निकालता। इस प्रकार एक महीने मैंने चिकित्सा की। यह सब मैंने अकेले ही किया। मेरे साथ कोई दूसरा पानी देनेवाला भी न था। इसी एक मासमें उस रोगसे छुटकारा मिला जो किसी भी चिकित्सासे नहीं गया था और दो सालसे मुझे परेशान कर रहा था। तभीसे प्रचलित चिकित्सा-प्रणालियों व उनकी ओषधियोंपरसे मेरा विश्वास उठ गया। ओषधियां लाभ तो करती नहीं, रोगकी जड़को ही मजबूत करती हैं और रोगके जानेमें रुकावट पैदा करके रोगको शरीरमें जमा देती हैं। तबसे मैं प्राकृतिक रहन-सहनका प्रेमी हो गया और तभीसे मेरा विचार आरोग्य-मंदिर देखनेका तथा वहां रहकर कुछ अधिक

सीखनेका हो आया। फलस्वरूप जून १९६२ की तीसरी तारीखको मैं आरोग्य-मंदिर, गोरखपुर पहुंचा। वहां लगभग ९० स्वास्थ्यार्थी भारतके कोने-कोनेसे आकर इलाज करा रहे थे। मैंने जाकर सोचा, मैं साढ़े चार सौ मील दूरसे आया हूं तथा अन्य कोई भी इतनी दूरका यहां नहीं आया होगा। सभी व्यक्तियोंसे बात-चीत करके मैं हैरान रह गया कि बारह-चौदह सौ मील दूरतकके लोग वहां इलाज कराने आये हुए हैं। लुधियाना (पंजाब), तिनसुकिया (असम), कोटा (राजस्थान), पटना (बिहार), गुजरात आदि स्थलोंके लोग वहां थे। आरोग्य-मंदिर जाकर और अन्य व्यक्तियोंके साथ रहकर ऐसा लगा कि हम भारत-भरकी सैर कर रहे हों और दर्शनीय स्थानोंके स्थानपर विभिन्न प्रकारके लोगोंसे मिल-जुल रहे हों। आरोग्य-मंदिरमें रहकर प्रातः-सायं वहांके आस-पासके दृश्य देखने और वहां घूमनेमें वास्तवमें बड़ा ही आनंद आता है। आरोग्य-मंदिरमें एक महीने रहा और कटिस्नान, बाष्पस्नान-मालिश, विविध कसरतों और आसन-प्रणायामद्वारा मैंने अपने शरीरको सुदृढ़ बनाया। आश्चर्यकी बात यह है कि जून मासमें भी गोरखपुरमें खास तौरसे रातमें ठंढक रहती है। जब मैं वापस आया तो मुझे तीन-चार दिन बड़ी गरमी मालूम हुई। लोग आरोग्य-मंदिर रोज ही आ रहे थे और पुराने अच्छे होकर जा रहे थे। अधिकांशकी कहानी मेरे-जैसी ही थी। जो दवा कराकर हार चुके थे। एक सज्जन जिनका नाम तो मुझे याद नहीं रहा, तिनसुखिया (असम) के रहनेवाले थे, वे दो साल पहले आरोग्य-मंदिरमें अपने दमे रोगका इलाज करा गये थे और अब डेढ़ महीनेके लिए आरोग्य-मंदिरमें अपनी पत्नीकी चिकित्साके लिए आये हुए थे। बातचीत करनेपर उन्होंने मुझे बताया कि बारह वर्षकी आयुमें दमासे पीड़ित हुए थे और पचास वर्षकी आयुतक वे दमासे पीड़ित थे और भुगतते रहे, कोई भी इलाज कारगर सिद्ध नहीं हुआ। आखिरमें आरोग्य-मंदिरकी केवल ढाई मासकी चिकित्सासे ठीक हो गये थे।

जबतक मैं आरोग्य-मंदिर नहीं गया था प्राकृतिक रहन-सहन रखता था परंतु बीड़ी-सिगरेट पीता था। वहां एक मास रहनेपर यह बुरी लत भी छूट गयी, क्योंकि वहां कोई सिगरेट, बीड़ी, चाय पीता ही न था। इस वातावरणका फल यह हुआ कि यह आदत मैं आसानीसे छोड़ सका। अब मुझमें कोई हानिप्रद आदत नहीं है। पहले मैं ऐनक लगाता था पर अब वह भी छूट गयी है। मेरा तो यह पक्का विचार है कि प्राकृतिक चिकित्सा कोई चिकित्सा-प्रणाली नहीं है। यह जीवन जीनेकी एक सरल रीति है जिसपर चलकर किसी भी रोगसे मुक्ति पायी जा सकती है और जिसपर चलकर हमेशा रोगमुक्त रहा जा सकता है।

—श्री छत्रसिंह गहलौत

: १२ :

रक्तचाप

बात १९६१ की है मुझे सिरमें चक्कर आने लगे, बराबर बेचैनी लगती, शौचके साथ आंव आती, कमजोरी लगा करती, नींद आती ही नहीं थी। त्वचापर बड़ी खुजली रहती। मुझे लगा कि, मैं किसी भयानक बीमारीकी ओर बढ़ रहा हूं। और, किसी समय भी मैं पागल हो सकता हूं। इसके लिए सरल इलाज एलोपैथीकी शरणमें मैं गया और मोतिहारीके एक प्रसिद्ध डाक्टर के पैर पकड़े। उन्होंने जांचकर बताया कि, मेरा रक्तचाप बहुत बढ़ गया है। इसके लिए उनकी दवा तीन महीने चली। इतना समय लगनेपर भी लाभ तो कुछ नहीं हुआ, शरीरपरकी खुजलाहट बहुत बढ़ गयी, बेचैनी भी बढ गयी और आंव अधिक आने लगी।

फिर, पटनाके एक डाक्टर के यहां पहुंचा । उहोंने भी रक्तचापकी वृद्धि ही मेरा रोग वताया और कहा कि, "नमक थोड़ा कम खायें और सब कुछ जो जीमें आये खा सकते हैं।" और, ये मुझे बहुत अधिक मात्रामें दवा देने लगे। चार-पांच दिन ही उनकी दवा ली थी कि, मुझे खून मिले आठ-दस दस्त रोज आने लगे। टट्टीके साथ खून देखकर मेरी हालत खराब हो जाती। डाक्टर साहब से कहा, तो उन्होंने कई नयी दवायें दीं; पर खून नहीं रुका, तो मैं एक आयुर्वेदिक कालेजके प्रिंसिपल के पास गया। उनके इलाजसे इतना सुधार हुआ कि, खून बंद होकर सफेद आंव बहुत अधिक मात्रामें आने लगी। इससे अधिक लाभ वे मुझे नहीं पहुंचा सके।

इस निराशाकी अवस्थामें मुझे प्राकृतिक चिकित्साकी याद आयी और मुझे लगा कि, अब मेरा उद्धार प्रकृति मां ही कर सकती है। मैं 'आरोग्य' बराबर पढ़ता था। अत: प्राकृतिक-चिकित्सासे परिचित था। मेरे घरवालोंने भी सोचा कि, अब प्राकृतिक चिकित्सा क्यों न आजमायी ज़ाये। उनके परामर्शसे मैं दूसरे दिन ही 'आरोग्य-मंदिर' पहुंच गया। यहां मेरी परीक्षा हुई और मुझे बताया गया कि, आप यहां बड़ी आसानी से पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त कर लेंगे, सभी शिकायतें चली जायेंगी और हमेशा स्वस्थ रहने की कला आप यहां सीख जायेंगे। मैंने इलाज कराना शुरु कराया। सुबह नाश्ते मुझे एक पाव अमरूद और एक पाव कच्चा दूध मिलता और दोपहर-शाम चोकरसमेत आटेकी रोटी और उबली हरी सब्जियां मिलतीं। चिकित्सामें मिट्टीकी पट्टी और एनिमा तथा सुबह-शाम कटि-स्नान मुझे मिलता।

सात दिन यह सरल चिकित्सा चली थी कि, मुझे भयंकर जुकाम हो गया। सुबह एक साथ सैकडों छींकें आतीं और दिनभर नाकसे पानी गिरता रहता। रूमाल घंटेभरमें इतना भीग जाता कि, निचोड़ा जा सकता था। चिकित्सकको और मुझे भी खुशी थी कि, मेरा जीर्ण रोग तीव्र रोगमें परिणत हो गया है। तीव्र रोगोंमें तो केवल उपवास ही विहित है। अत:, मुझे उपवास कराया गया। तीन दिनोंमें ही मेरा जुकाम चला गया। पर, उपवास एक सप्ताह चला। उपवासमें मैं नित्य केवल डेढ़-दो सेर पानी पीता, नित्य एनिमा लेता और आराम से लेटा रहता। एक सप्ताह बाद मुझे पथ्यमें दलियेका पानी दिया गया। वह पचनेपर धीरे-धीरे दोपहर-शाम मैं रोटी-सब्जी लेने लगा और सुबह वही ताजा पका अमरूद। जुकामका परिणाम यह हुआ कि, आंव आना बंद हो गया, खुजलाहट चली गयी, सिरमें चक्कर आना बंद हो गया और सारी शिकायतें चली गयीं। चिकित्सा कराये आज सोलह वर्ष हो गये, आज मैं कह सकता हूं कि, मेरी सारी शिकायतें सदाके लिए चली गयीं।

मैं मोटा भी था, तोंद निकली हुई थी। वह तोंद भी दूर हो गयी और मेरा शरीर स्वाभाविक सुडौल हो गया। पर, वजन बहुत घट गया था। उसे थोड़ा बढ़ानेके लिए, मैं तीन सप्ताह आरोग्य-मंदिरमें और रहा। तीन हफ्तेमें मेरा वजन दस पौंड बढ़ गया और पूरी शक्ति आ गयी। शक्ति आनेपर मैं घर लौट आया। तबसे आजतक मैं पूरा तंदुरुस्त हूं। आज तक न मैं बीमार पड़ा और न कोई दवा ही लेनी पड़ी।

तबसे आजतक मैंने चीनी नहीं छुई, मांसाहार बंद कर दिया। सुबह मैं फल-दूध लेता हूं और दोपहरको दाल-भात और अधिक मात्रामें तरकारियां। शामको रोटी-सब्जी खाता हूं। नाश्तेमें मैं कभी अन्न नहीं लेता, फल ही लेता हूं। जिस दिन फल नहीं मिलता उस दिन तुलसी-दल चबाकर रह जाता हूं।

मेरे जीवनमें बड़ी नियमितता आ गयी है। मेरे सभी काम समयपर होते हैं। खाना, पीना, सोना, जल पीना और कसरत करना सभी समयपर होते हैं।

—श्री शिवप्रसाद गुप्त

: १३ :

मधुमेह

जब मेरी उम्र पैंतीस वर्षकी थी तब मुझे रोगोंने घेरना आरंभ किया। नींद कम होने लगी, भूख कम हो गयी, कब्ज रहने लगा, हाथ-पैरमें दर्द रहता और सुस्ती छाई रहती। इससे मुक्ति पानेके लिए मैं घरमें देशी इलाज करता रहा और इसीमें दो साल बीत गया। फिर भी आराम नहीं आया। इसी बीच पेशाबकी मात्रा बढ़ गयी, बार-बार जाना पड़ता, जिनकी संख्या दिन रातमें दस-से-बारह बार हो जाती। लोगोंकी नजरों-में मेरा चेहरा बीमारका चेहरा हो गया, चेहरा पीला और वदन रूखा हो गया था। लोगोंने कहा कोई अच्छा इलाज कराओ तो डाक्टरोंसे इलाज करवाना शुरू किया। इस समय मुझे खांसी भी आने लगी थी और ज्वर भी रहने लगा था। ६ महीने घरपर इलाज कराया। फायदा न होनेपर मैं इलाजके लिए लखनऊ चला गया। उससे भी लाभ न होनेपर पटना गया और वहां अस्पतालमें भर्ती हो गया। वहां नौ महीने रहा खांसी ज्वर तो कम हो गया पर पेशाबकी जांच करनेके बाद कहा गया कि, तुम्हारे पेशाबसे शक्कर अभी भी आती है और उसकी चिकित्सा एक मास और करनी पड़ेगी। एक मास और रहा। फिर भी शक्कर कम नहीं हुई तो बोले कि "हमारे एलोपैथिकमें शक्करका कोई इलाज नहीं है, तुम्हें कोई भी डाक्टर ठीक नहीं कर सकता। रोज इंसुलिनका इंजेक्शन लगाते रहो ठीक रहोगे।" इस तरह पटनामें पांच हजार रुपया खर्च होनेपर और एक सालका समय बरबाद होनेपर भी मैं अच्छा नहीं हुआ।

अब एक डाक्टरसे मिला तो उन्होंने कहा कि "अगर विचार कर वैद्यक इलाज किया जाय तो लाभ हो सकता है।" उनकी सलाहसे प्रांतके ऊंचे-से-ऊंचे वैद्यके पास गया और उन्हें अपने रोगका सारा इतिहास बताया। पेशाबकी जांच बतायी तो उन्होंने कहा कि "तुम्हारा रोग असाध्य नहीं है। दवा खाओ ठीक हो जाओगे।" उनसे एक माहकी दवा लेकर और पथ्य जानकर घर आया। हर मास रिपोर्ट भेजता और दवा करवाता और बीस माहतक दवा लेता रहा। कभी चीनी ४ प्रतिशत तो कभी ५ प्रतिशत तो कभी ६ प्रतिशत आती।

इसी बीच नाईसे हजामत बनवा रहा था कि उसके अस्तुरेसे मेरे हाथकी एक अंगुलीमें जरा-सी चोट आ गयी। खून नहीं निकला पर सूजन आने लगी और चौबीस घंटेमें पूरा हाथ सूजकर लौकीकी तरह हो गया और दर्द इतना था कि बरदाश्त नहीं हो रहा था। लोग मुझे फिर अस्पताल ले गये। वहां जाते-जाते मैं बेहोश हो गया। वहां डाक्टरने एलोपैथी और आयुर्वेदिक दोनों ही दवा साथ-साथ चालू की और तीन महीनेमें कुछ ठीक हुआ, फिर भी अंगुलीका आपरेशन करना पड़ा और उसके दो महीने बाद मैं ठीक हुआ। फिर भी शक्करकी बीमारी कटी नहीं। इस समय एक गुजराती डाक्टर मिल गये। उन्होंने बताया कि, हमारे गुजरातमें एक नामी वैद्य हैं। मैं बंबई गया और वहां वैद्यजीसे मिला। उन्होंने पूर्ण जांच की और दवा दी। बोले कि 'अगर मेरी दवा ६ माह-तक सेवन करोगे तो पूर्ण रूपसे स्वस्थ हो जाओगे।" उनकी दवा मैंने नियमसे ६ महीनेतक ली पर रोग कटा नहीं। बुराई यह हुई कि, दवासे मेरे शरीरमें गरमी व्याप्त हो गयी। जरा भी क्रोध आनेपर शरीर और माथा गरम हो जाता और मैं बेहोश होकर गिर जाता। एक दिन यह बेहोशी इतनी देर टिकी कि, मुझे मोटरमें डालकर ४४ मील एक डाक्टरके पास ले जाया गया; वहां एक डाक्टरने अपने पास पंद्रह दिन रखकर मुझे ठीक किया। होश आ गया। मैं सोचने लगा कि, मेरी

दवा करते-करते डाक्टर भी थक गये, मैं भी थक गया, सात वर्षका समय लगा। पच्चीस हजार रुपये लगे, लगा मेरा जीना बेकार है। पर, मैं रास्ता ढूंढ़ता रहा।

इसी बीच मुझे पता लगा कि, मेरे एक परिचित गोरखपुर आरोग्य-मंदिरसे चिकित्सा कराकर और स्वस्थ होकर आये हैं। मैं उनसे जाकर मिला उनसे प्राकृतिक चिकित्सा समझी। उनसे बातें करके बड़ा आश्चर्य हुआ कि मिट्टी-पानीसे वहां इलाज होता है। यह इलाज करानेकी मेरी हिम्मत नहीं हुई। पर तभी सुना कि, एक अन्य सज्जन इलाजके लिए आरोग्य-मंदिर जा रहे हैं। सो घूमनेके विचारसे मैं भी उनके साथ हो लिया। वहांका वातावरण देखकर और रोगियोंसे बात करनेपर मुझे संतोष हुआ और मैंने भी अपना इलाज कराना तै किया। आरोग्य-मंदिरमें मेरा भी इलाज शुरू हुआ। पहले मेरा भोजन बंद करा दिया गया। सुबह, दोपहर, शाम केवल फल खानेको मिला। बीस दिन बाद मुझे सुबह दो संतरा, एक पाव दही, दोपहरको उबली सब्जी और ढाई तोला बादाम और शामको दही-संतरा मिलने लगा।

चिकित्सामें मुझें बीस दिनतक रोज एनिमा दिया गया। सुबह-शाम मैं कटिस्नान लेकर टहलने लगा। मुझे कसरत और आसन भी कराये जाते। दिनके दस बजे मुझे मालिश या गरम ठंढा कटिस्नान दिया जाता। कभी-कभी भाप-नहान भी दिया जाता।

चिकित्सा शुरू होनेके आठ दिन बाद मेरे पेशाबकी जांच करायी गयी तो पेशाबमें शक्कर बिल्कुल नहीं निकली। बदन भी हल्का लगने लगा। मेरे मगजकी गरमी चली गयी, बढ़िया नींद आने लगी। रातको पेशाब आना बंद हुआ।

चिकित्सा चलाते एक मास हो जानेके बाद फिर भोजन बदला गया और मुझे दोपहरको सब्जीके साथ एक छटांक आटेकी रोटी भी मिलने लगी और बादमें शामके फल भी दहीके साथ जोड़ दिया गया। तीन

दिन बाद एक छटांककी जगह डेढ़ छटांक आटेकी और फिर तीन दिन बाद दो छटांक आटेकी रोटी मिलने लगी।

डेढ़ महीना पूरा होते-न-होते मैं बिल्कुल ठीक हो गया। मेरे सभी रोग लक्षण चले गये। मैं अपनेको सब कुछ करने लायक पाने लगा और मोदीजीसे आज्ञा लेकर घरके लिए रवाना हुआ। चलते समय मोदीजीसे मैंने पूछा कि अब मुझे क्या करना चाहिए। उनका जवाब था कि जो कुछ करके बीमार पड़े थे, वह नहीं करना चाहिए और जो करके स्वस्थ हुए हो वही करना चाहिए। मैंने फौरन उनका यह वाक्य अपनी डायरीमें नोट कर लिया और व्याख्या स्वरूप लिखा कि, क्या करनेसे बीमार पड़ा और क्या करके अच्छा हुआ। तो मुझे नित्य कसरत करनी चाहिए। नित्य टहलना चाहिए। भोजनमें रोटी-सब्जी-फल-दही रखना चाहिए। नींदभर सोना चाहिए और खुश रहना चाहिए।

घर आकर मैं इसी रास्तेपर चलने लगा और अब भी चल रहा हूं और निरायास चल रहा हूं। जीवनमें आनंद-ही-आनंद है ? कभी किसी रोगका सामना नहीं हुआ। मेरे संसर्गमें आकर अनेक व्यक्तियोंने न बीमार पड़नेका रास्ता सीखा और सीखते जा रहे हैं। पच्चीस हजार रुपए खर्च करके मैंने केवल अपना शरीर बिगाड़ा और डेढ़ महीनेकी प्राकृतिक चिकित्साने मुझे लोगोंका पथ प्रदर्शन करने लायक बना दिया। मैं और मेरे सभी घरवाले प्राकृतिक चिकित्साके कृतज्ञ हैं.।

—श्री रामानंद तिवारी

(२)

पांच साल पहलेकी बात है, मुझे फाइलेरियाका दौरा हुआ तो मेरे घरवाले मुझे हमारे जिले बस्तीके सदर अस्पतालमें ले गये और मैं वहां भरती हो गया। इस रोगकी चिकित्साके दौरानमें मेरे पेशावकी

जांच हुई तो ज्ञात हुआ कि, मेरे पेशाबमें दो प्रतिशत चीनी भी आती है। फाइलेरिया उस समय इंजेक्शन वगैरहसे दबा दिया गया; पर जब मैंने चीनी आनेकी बीमारीके बारेमें डाक्टरसे बात की तो डाक्टर साहबने मुझे बताया कि, "इस रोगकी दवा करना तुम्हारे सामर्थ्यकी बात नहीं है, तुम परहेजसे रहो, ठीक रहोगे।" डाक्टर साहबने परहेज बताया कि, मैं चनेकी रोटी, चनेकी दाल और चनेकी दालमोठ, सेव, पकौड़ी वगैरह अधिक खाऊं। डाक्टर साहबने गेहूंकी रोटी, चावल, फल आदि खानेको मना किया। मैं घर जाकर डाक्टर साहबके कहने के अनुसार पांच-छह महीने चला; पर मुझे मेरे स्वास्थ्यमें कई तरहकी अवनति प्रतीत होने लगी, कब्ज बराबर रहता और सुस्ती घेरे रहती। लोगोंने भी कहा कि, अब तुम अच्छे हो गये; इसलिए मैंने वह रास्ता छोड़ दिया।

चार साल बाद मेरे शरीरमें भयंकर रूपसे फोड़े निकले, जो किसी तरह अच्छे ही न होते थे। इनकी चिकित्साके लिए मैं फिर बस्तीके सदर अस्पतालमें भरती हुआ। इस बार फिर पेशाबकी परीक्षा हुई, तो चीनी पांच प्रतिशत निकली। फोड़ोंका कारण पेशाबकी चीनी ही बतायी गयी और उसे दूर करनेके लिए मुझे सुबह नाश्तेके पहले, दोपहर और शामको भोजनके पहले, इंसुलिनका इंजेक्शन लगा दिया जाता। अस्पतालकी पचीस दिनकी चिकित्सासे मेरे फोड़े बिलकुल चले गये। अब पेशाबकी जांचकी गयी तो चीनी दो प्रतिशत निकली और डाक्टर अस्पतालसे छुट्टी देने लगा। मैंने डाक्टरसे प्रार्थना की कि, चीनीकी बीमारी पूरी तरह ठीक होने पर छुट्टी दी जाय, तो डाक्टरने कहा कि, यह रोग अच्छा नहीं होता, इसी तरह सुबह, दोपहर, शाम इंजेक्शन लेते रहो तो ठीक रहोगे। घर आकर मैं एक वैद्यजीसे जो इंजेक्शन देना जानते थे, इंजेक्शन लेता रहा। पर, इंजेक्शन कबतक लूं? जिंदगीभर इंजेक्शनके पैसे कहांसे मिलेंगे? अतः मैं अब ऐसी विधिकी खोजमें पड़ा, जो इंजेक्शनसे छुटकारा दिला दे।

कुछ मित्रोंने प्राकृतिक चिकित्साकी बात बतायी। उनमेंसे कइयों-ने इसके लिए आरोग्य-मंदिर जानेकी राय दी। वे आरोग्य-मंदिरसे अच्छे होकर आये कई रोगियोंसे मिल चुके थे। मैंने उनकी बात मानकर अपने भतीजेको, जो एम० ए०में पढ़ता है, आरोग्य-मंदिरमें जाकर वहांके चिकित्सकसे बात करने और प्राकृतिक चिकित्साकी शक्तिको समझनेको भेजा। उसने आकर बताया कि, मधुमेह प्राकृतिक चिकित्सा-द्वारा जरूर चला जायगा। अतः एक दिन सुबह ही मैं आरोग्य-मंदिर पहुंच गया। इंजेक्शन लेना मैं छोड़ चुका था। अतः इस समय बड़ी सुस्ती मालूम पड़ती थी और मीठी चीजें खानेको बहुत दिल चाहता था, इससे मैं अनुमान लगा रहा था कि, चीनी इस समय पांच प्रतिशत जरूर होगी।

आरोग्य-मंदिरमें चिकित्सकने मेरी परीक्षाके बाद चिकित्सा शुरू की। सुबह-शाम मुझे कटिस्नान कराया जाता और इसके बाद मैं टहलने जाता। सुबह दस बजे मुझे सप्ताहमें दो दिन मालिश मिलती, दो दिन धूप-स्नान और दो दिन गरम-ठंढा कटिस्नान कराया जाता और इसके बाद मुझे ठंढे पानीसे स्नान कराया जाता।

भोजनमें मुझे सुबह मठा तथा दोपहर-शामको चोकरसमेत गेहूंके आटेकी रोटी और हरी तरकारियां दी जातीं। एक सप्ताह बाद मुझे केवल हरी तरकारियां दी गयीं और फिर तीन दिनका उपवास कराया गया। उपवासके बाद मैं एक सप्ताह केवल मठा लेकर रहा। और, इसके बाद मुझे सुबह मठा, दोपहर-शाम रोटी-सब्जी दही दिया जाने लगा।

चिकित्सा मुझे लाभ कर रही है या नहीं यह जाननेको मैंने एक सप्ताह बाद पेशाबकी जांच करायी तो पेशाबमें चीनी नहीं थी। मुझे बड़ी खुशी हुई। मैं मन लगाकर चिकित्सा करने लगा। मेरी चिकित्सा कुल पचीस दिन हुई और बिल्कुल चंगा होकर घर लौटा।

घर आये मुझे ६ महीने हो गये। जब मैं आरोग्य-मंदिरमें भरती हुआ था तो मेरा वजन ११२ पौंड था। पचीस दिन बाद जब मैं घर

आया तो वजन १११ पौंड था। आज छह महीने बाद वजन ११६ पौंड है। मेरी उम्र बावन साल है। इस चिकित्साका प्रभाव है कि, अपनी खेती-बारीका काम मौजसे करता हूं। आठ-दस मील चल भी लूं, तो कोई कष्ट नहीं होगा। अपनेमें पूरी शक्तिका अनुभव करता हूं। कब्ज अब नहीं रहता। मुझे बवासीर भी थी, वह भी चली गयी।

चिकित्साके दौरानमें मुझे एक बार फाइलेरिया का दौरा भी हुआ था; बवासीर भी जोरोंसे उभरा था, जो स्वतः चले गये।

अब जाड़ेके दिनोंमें मैं खूब टमाटर, संतरा, गाजर, शाक खाता हूं, दही खाता हूं और चोकर-समेत आटेकी रोटी खाता हूं और मस्त हूं तथा प्रकृति-माता के गुण गाता हूं कि, जिस रोगको डाक्टरोंने असाध्य बता दिया था वह प्रकृतिकी कृपासे अच्छा हो गया।

—श्री रामनिवास त्रिपाठी

: १४ :

एक्जिमा

मैं गोरखपुर-स्थित फर्टिलाइजर-कारखानेके हायर सेकेंडरी स्कूलमें १९६६ से अध्यापिकाका काम कर रही हूं। १९७३ की बात है कि, मेरे दोनों पावोंमें एक दिन खुजली होने लगी, प्रदाह मालूम हुआ और २-३ दिन बाद दाने निकल आये। हमारे कारखानेका अपना अस्पताल है। उसमें मैंने चिकित्सा करायी। चिकित्सा लगभग ६ महीने तक चलती रही। जो भी दवाएं डाक्टरने बतायीं, सबका विधिवत् प्रयोग किया। न जाने कितने इंजेक्शन लगे। तब कहीं वे दाने सूखे। समझा कि, मैंने कष्ट से मुक्ति पा ली।

पर, १९७४ में जब पुन: पैरोंका कष्ट बढ़ा, तो मेरी पहलेकी आशा निराशामें बदल गयी और मुझे भास हुआ कि, जिसे मैंने पहले कष्टसे मुक्ति समझा था, वह मात्र एक अस्थायी चीज थी। इस बार पैरके कष्टने बड़ा उग्र रूप धारण कर लिया। दोनों पैरोंमें कहीं चमड़ा दिखता न था और बेतरह मवाद उन फोड़ों से बह रहा था। इस बार मुझे ज्ञात हुआ कि, मैं एक्जिमासे पीड़ित हूं।

उन्हीं दिनों मेरे श्वसुर गोरखपुर आये थे। वे प्राकृतिक चिकित्सा प्रेमी हैं और पहले आरोग्य-मंदिरमें नाड़ी-विकार और अशक्तताकी चिकित्सा करा चुके थे। जब वह आरोग्य-मंदिरमें चिकित्सा करा रहे थे तो मैं और मेरे पतिदेव उनसे मिलने प्राय: जाया करते थे। इस नाते हम लोगोंका भी खासा परिचय आरोग्य-मंदिरके संचालक श्री विट्ठल-दास मोदीसे हो गया था। मेरे श्वसुरने मेरी दशा देखी तो मुझे समझाया

कि, एलोपैथीसे तो यह एक्जिमा जानेका नहीं। दवा सम्भव हैं, इस बार भी दवा दे; पर इस प्रकार इसे दबानेसे या तो तुम दमाकी मरीज हो जाओगी या गठियाकी। अच्छा हो, तुम अपना इलाज आरोग्य-मंदिरमें कराओ।

यह बात मुझे भी जंची और मेरे पतिको भी। मेरे पति मुझे लेकर आरोग्य-मंदिर गये और वहांके संचालककी सलाह से मेरा इलाज चलने लगा। मोदीजी ने मुझे दो सप्ताह तक प्रातः नाश्तेमें फल और दोपहर शाम चोकरदार आटेकी रोटीं और सब्जी खानेकी सलाह दी। इसके बाद जब उपवासका समय आया तो मैं 'आरोग्य-मंदिर'में भरती हो गयी और ७ दिनका उपवास किया। इस उपवास-कालमें मुझे अधिक-से-अधिक पानी पीनेको कहा गया था तथा रोज एनीमा देकर मेरा पेट साफ कर दिया जाता। इस बीच मैं नित्य दोनों समय कटिस्नान भी लेती।

इस चिकित्सा-कालमें एक्जिमाने बड़ा उग्र रूप धारण किया और मेरी दोनों टांगें सड़-सी गयी थीं। अब उस पर मिट्टीकी पट्टी रखी जाने लगी। इससे जख्म घटने लगे और इतनी तेजीसे सूखे कि, कोई विश्वास भी नहीं कर सकता। उपवास समाप्त होते-होते घाव सूख गये थे। अब मुझे फलका रस दिया जाने लगा। २ दिन बाद फल। ३ दिन बाद सुबह फल, दोपहर-शाम रोटी-सब्जी मिलने लगी। इस प्रकार रोगमुक्त होकर मैं घर लौटी।

चिकित्सा-कालमें मेरा वजन ९ किलो घट गया था। पर, उस वजन घटनेसे न तो मुझे कमजोरी मालूम होती और न सुस्ती। बल्कि कहिए, मुझमें एक नयी स्फूर्ति आ गयी थी। मैं स्वयं स्कूलमें काम करती हूं, यह तो कह ही चुकी हूं। सारा कामकाज घरका भी और स्कूलका भी मैं बड़े उत्साहसे करने लगी।

अगले ३ महीनोंमें मैंने अपना पुराना वजन भी पुनः प्राप्त कर लिया है।

१९७४ में मैंने आरोग्य-मंदिरमें इलाज कराया था, यह १९७८ है। ४ वर्ष हो गये मुझे कोई कष्ट एक दिनके लिए भी फिर नहीं हुआ।

आरोग्य-मंदिरमें अपनी चिकित्सा कराने के बाद, अब मैं यह मानने लगी हूं कि, सचमुच वह एक ऐसा मंदिर है, जहां जाकर व्यक्ति स्वास्थ्य लाभ करता है। वह बना ऐसे मनोरम स्थान पर है कि,रोगी-की तबीयत अंदरसे प्रसन्न हो जाये और वहां की व्यवस्था ऐसी अच्छी है कि, रोगीको लगता ही नहीं कि, वह घर छोड़कर कहीं बाहर गया है। आरोग्य-मंदिरमें सप्ताहमें दो बार प्राकृतिक चिकित्सा पर व्याख्यान होते हैं। जब भी सुविधा होती है, अब भी मैं और मेरे पति यह व्याख्यान अवश्य सुनने जाते हैं। इससे प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने के लिए मुझे हमेशा प्रोत्साहन मिलता रहता है।

—श्रीमती सरोज वालिया

: १५ :

इन्फ्लूएंजा, बुखार, कंठमाला

मेरी उम्र इस समय ३६ वर्षकी है। वचपनसे चार वर्ष पहले तक कोई-न-कोई रोग मुझे सताता आया हूँ। सर्दी, खांसी, कब्ज-अजीर्ण, पेटका दर्द, जोड़ोंका दर्द मेरे वचपनके साथी थे। इन रोगोंका इलाज कराते-कराते वहुतसे डाक्टर-वैद्य-हकीम मेरे दोस्त हो गये थे। इनकी कृपासे अनेक तरहकी दवायें, अवलेह, आसवादि मेरे मुख्य भोजन हो गये। सारा दिन दवाओंके ही चक्करमें बीतता था।

गांवमें दवाका सुभीता न था। अतः मैं सांगरियामंडी पढ़ने चला गया। वहां अच्छा औषधालय था। पढ़नेके लिए मैं छात्रावासमें रहा। छात्रावास खुलेमें था। नित्य कसरत करायी जाती। चाय-सिगरेट पीना वहां सख्त मना था। भोजनमें केवल दो वक्त रोटी-सब्जी मिलती। सुबह दूध मिलता। इसका फल यह हुआ कि, मेरी तबीयत ठीक रहने लगी। दवा कम लेनी पड़ी।

सन् ७२ में दसवीं कक्षामें पढ़ने हिसार पहुंचा। यहां जीवन सर्वथा अप्राकृतिक हो गया। फिर, रोगोंने मुझे घेर लिया। इंफुलुएंजा हो गया। बुखार रहने लगा और कंठमाला हो गया। पर, मैं पास होनेके लिए पढ़ता ही रहता। बीमारी अपनी पूरी जवानीपर थी; पर मुझमें जवानीका नामो-निशान न था। मुसीबतके दिन काट रहा था। साथियों-ने कहा 'पढ़ाई छोड़ दो।' पर, मैं तो माने बैठा था कि; "मुसीबतसे लड़नेका नाम जिंदगी है।" सो मैं पढ़ता ही रहा और रोगोंसे दवाओंके

अस्त्रोंसे लड़ता रहा। नतीजा यह हुआ कि मैं दसवीमें तो पास हो गया पर रोग मेरे बढ़ गये। घिसटते-घिसटते मैंने एफ० ए० भी पास किया।

सन् ७३ में बीमारी इस तरह बढ़ गयी कि अस्पतालमें भरती होना पड़ा और एक वर्ष तक भरती रहा। तीन आपरेशन किये गये। गर्दनके चारों तरफसे गांठें निकाली गयीं। तीन सौके करीब सूइयां दी गयीं। कोई पांच हजार रुपये खर्च हुए। शरीर छलनी हो गया। गांठें तो ठीक हो गयीं; पर पेटमें दर्द रहने लगा। बढ़कर छातीमें भी दर्द रहने लगा। पेशाव जांच करानेपर कभी पेशावमें चीनी भी मिल जाती। इन सब रोगोंकी अलग-अलग दवा होती रहती। मेरे पिताजी दवा करानेके लिए रुपये देनेमें संकोच न करते, पर हमेशा प्रकृतिकी राह चलनेको कहते। प्राकृतिक चिकित्साके प्रेमी होनेके नाते वे मुझे प्राकृतिक चिकित्साकी पुस्तकें भी खरीदनेको कहते; पर मैं उनकी बातोंपर कान न देता। उनके बहुत कहनेपर "आरोग्य" मांगने लगा और उसे प्रतिमास पढ़ने लगा। उसकी बहुत-सी बातें मुझे अच्छी लगतीं। मैं उनके अनुसार चलता पर मौतके डरसे दवाकी गोलियां भी लेता रहता।

यह सिलसिला चल ही रहा था कि, मेरे पिताजीने मुझे आरोग्य-मंदिर जानेपर जोर दिया। उन्होंने कहा कि, अगर बचपनकी साथी इन दवाओंसे छुटकारा पाना चाहते हो तो पूरी तरह प्रकृतिकी शरणमें जाओ। वह तुम्हें पूर्ण स्वस्थ कर देगी। मैं दवासे हार चुका था और 'आरोग्य' द्वारा प्राकृतिक चिकित्सासे परिचित भी हो चुका था; पर यह शंका बनी ही थी कि क्या जब हजारों रुपयोंकी दवा मुझे ठीक नहीं कर सकीं तो क्या मिट्टी, पानी, धूप हवासे मैं अच्छा हो जाऊंगा? पर, मैंने अपने मनकी बहुत कर ली थी अतः पिताजीका आदेश मानकर गोरखपुरके लिए रवाना हो गया।

आरोग्य-मंदिर पहुंचनेपर मेरे रोगका इतिहास सुना गया, जो मैंने

दवायें ली थीं उनकी बात जानी गयी। स्वास्थ्यकी परीक्षा की गयी। और, मेरी चिकित्सा शुरू हुई। एक सप्ताह मुझे फलाहार कराया गया। उन दिनोंमें पेटमें दर्द होता ही रहा तो उपवास शुरू कराया गया और उपवास मैंने इक्कीस दिनतक किया। उपवासमें और सब तो ठीक रहा; पर पेटमें जलन लगी रहती उसे बुझानेको मैं चार-पांच सेर पानी पी जाता। रोज एनिमा लेता। खाता कुछ नहीं पर सोलह दिनतक रोज काला, जमा हुआ बदबूदार मल आता ही रहा।

इक्कीस दिन बाद चार दिनतक मैं किशमिशका रस लेता रहा फिर दुग्ध-कल्प शुरू हुआ। उस समय दुग्ध-कल्प करनेवाले हम सात साथी-थे। सुबह मैं टहलने जाता था; पर दूध शुरू करनेपर दिनभर लेटा ही रहता। दूध हर आध घंटे पर पीना पड़ता था और मैं शीघ्र ही आठ सेर दूध नित्य पीने लगा था। दूधकल्पमें एनिमा बंद कर दिया गया था; क्योंकि शौच स्वयं ही जाता था। दूधकल्पमें रोज या तो मैं मालिश लेता था या गरम पानीसे भरे टबमें लेटकर आध घंटेतक नहाता था। दूध खूब पचता था। इतना दूध पीनेपर भी भूख बराबर बनी रहती और दूध पीनेकी इच्छा बनी रहती। दूध मैंने पैंतालिस दिन पिया।

उपवासमें मेरा वजन २१ पौंड घट गया था। कल्पमें छब्बीस पौंड बढ़ा। मेरा रक्त शुद्ध और शरीर निर्मल हो गया। रोग सारे चले गये।

दुग्धकल्पके बाद मुझे धीरे-धीरे साधारण भोजनपर लाया गया। मैं फल-दूध-दलिया-रोटी-सब्जी लेने लगा।

दीपावली आ गयी थी सो मैं घर जानेको तैयार हुआ। आरोग्य-मंदिर छोड़ते वक्त मेरी आंखोंसे आंसू आ गये। छोड़नेको जी नहीं चाहता था। वहांकी प्रत्येक चीजसे, प्रत्येक व्यक्तिसे मेरी ममता बढ़ गयी थी—स्वास्थ्य जो मुझे वहां मिला था।

घर पिताजी प्राकृतिक चिकित्साके प्रेमी हैं ही। मैं भी उनका साथी हो गया। धीरे-धीरे सारे घरको यह जीवन भा गया। आज चार वर्ष हो गये मैं खूब स्वस्थ्य हूं। कभी मुझे कोई दवा नहीं लेनी पड़ी। मुझे ही नहीं मेरे घरमें किसीको कोई दवाई नहीं लेनी पड़ी। कभी किसीको कुछ होता है तो मैं प्राकृतिक रीतिसे उसे स्वस्थ्य कर लेता हूं। आश्चर्य हैं कि, जीवन भर दवा खाते रहने पर भी मैं किसीको दवा देने लायक नहीं हुआ; पर आरोग्य-मंदिरने मुझे प्राकृतिक चिकित्सक बना दिया।

—श्री राम नरेश यादव

टांसिल और सर्दी-खांसी

मेरा अष्टवर्षीय पुत्र अखिलेश कुमार एक लम्बे अर्सेसे टांसिलसे पीड़ित था। इसके कारण वह सर्वदा सर्दी-खांसीसे तंग रहता था। मैंने लगभग ६ महीने तक होमियोपैथिक चिकित्सा करायी। पश्चात् एलोपैथिक चिकित्सा करायी। फिर भी संतोषजनक फल प्राप्त नहीं हुआ। एक नयी बीमारी सामने आ गयी। उसके हृदयकी धड़कन बहुत बढ़ गयी। स्वास्थ्य बहुत तेजीसे गिरने लगा।

बात दिसम्बर १९६८ की है। संयोगसे हमारे प्रखण्डके राजकीय चिकित्सालयमें हमारे एक सम्बंधी डाक्टर इंचार्ज होकर आ गये। मैंने बच्चेके स्वास्थ्यकी परीक्षा उनसे करायी। उन्होंने हमसे बताया कि, बच्चेका स्वास्थ्य तेजीसे गिरनेका प्रधान कारण टांसिल तथा हृदयकी कमजोरी है। इसलिए टांसिलका आपरेशन जल्द करा दें। मैंने उनसे पूछा कि, क्या टांसिलका आपरेशन करा देनेसे यह रोग मुक्त हो जायगा—इसकी गारंटी आप देते हैं। इसपर डाक्टर साहबने कहा, "इसकी गारंटी कोई नहीं दे सकता। आपरेशन सफल भी होता है, असफल भी।"

अंतमें मैंने निर्णय किया कि, क्यों न बच्चेकी चिकित्सा एक बार आरोग्य-मंदिर, गोरखपुरमें करा ली जाय? इस निर्णयके अनुसार दिसम्बर १९६८ में अपने पुत्रके साथ आरोग्य-मंदिर गोरखपुरमें पहुंचा।

आरोग्य-मंदिरमें मेरे पुत्रको आशातीत सफलता मिली। प्रातः नित्यक्रियासे निवृत्त होनेके बाद एक पाव गाजर एवं अमरूद नाश्तेमें लेना

पड़ता था। उसके बाद ६ बजे पेड़ू पर मिट्टीकी पट्टी आध घंटे तक रखनी पड़ती थी। मिट्टीकी पट्टी उतारने पर एनिमा लेना पड़ता था। पश्चात् स्नान कर ग्यारह बजे भोजन करना पड़ता था। भोजनमें चोकर-समेत आटेकी रोटी, गेहूंकी दलिया एवं उबाली हुई दो सब्जियां मिलती थीं। नमक बिल्कुल वर्जित था। भोजनके समय यह सावधानी बरतनी पड़ती थी कि, भोज्य पदार्थ इतने चबाये जाते थे कि, जब वे अर्द्ध-तरल अवस्थामें हो जाते थे तब ही निगले जाते थे। भोजनके बाद दो घंटे तक विश्राम किया जाता था।

सन्ध्या तीन बजे छाती एवं गलेकी गीली पट्टी दी जाती थी। गले-में गीली पट्टी देनेके पूर्व मालिश कर दी जाती थी। सन्ध्या ५ बजे पुनः एक पाव गाजर नाश्तेके रूपमें दिया जाता था। रात्रि सात बजे दलिया-रोटी एवं सब्जी भोजनमें दी जाती थीं।

इस चिकित्सा-क्रमसे सर्वदा रहने वाली सर्दी एवं खांसी हमेशाके लिए चली गयी। बच्चेके स्वास्थ्यमें तीव्र गतिसे सुधार होने लगा। पन्द्रह दिनों तक आरोग्य-मंदिरमें रहनेके बाद मैंने संचालक महोदयसे घर जानेकी अनुमति मांगी।

चलते समय संचालक महोदयने बताया कि, उपयुक्त चिकित्सा-क्रम एवं भोजनको तीन महीनेतक अवश्य घर पर भी चालू रखेंगे। लड़का बिल्कुल चंगा होकर रहेगा।

घर आकर मैंने पूरी निष्ठा एवं विश्वासके साथ उपर्युक्त चिकित्सा-क्रमको चालू रखा। एक महीनेके बाद मैंने पुनः अपने प्रखण्डके डाक्टरसे बच्चेके स्वास्थ्यकी परीक्षा करायी। परीक्षोपरान्त डाक्टर-साहबने हर्ष मिश्रित विस्मयसे कहा—"अब तो यह पता ही नहीं चलता है कि, यह वही बालक है, जिसके स्वास्थ्य-परीक्षा मैंने आरोग्य-मंदिरमें आपके

ले जानेके पूर्व की थी। आज इसकी टांसिल एवं हृदयकी धड़कनकी हालत एकदम ठीक है।"

फिर भी मैंने आरोग्य-मंदिरके संचालक महोदयके परामर्शके अनुसार यह चिकित्साक्रम तीन महीनों तक चालू रखा। इससे बच्चा पूर्ण स्वस्थ हो गया। तबसे आजतक उसे कोई बीमारी नहीं हुई।

—श्री श्याम नन्दन सिंह

: १७ :

बहरापन

मेरी पहली संतान चि० रामलाल सिंह मुझे १८ वर्षकी उम्रमें हुई। उस समय मेरी सास जीवित थीं। अपने इकलौते पुत्र (मेरे पतिदेव) के पुत्र होनेके नाते, वे उसे सदा आंख-कानमें डाले रहतीं। अपनी दादी-का लाड़ला सदा उनकी ही गोदको सुशोभित किये रहता। मुझे कभी-कभी खीझ होती और उसे खिलानेको जी भी करता; पर दादीके पास उसके रहनेसे मुझे एक सुख भी था कि, सभी काम-काज मैं निश्चिंत होकर कर लेती। मेरी सासके तीन-चार बच्चे मर चुके थे, अतः वह अपने पौत्र-को पानकी तरह फेरा करतीं। जरा छींक आयी उसे कपड़ोंमें लपेट लिया। हींग और राईके तेलकी मालिश होने लगी। जायफल घिसकर दिया जाने लगा और जरा दो दिन बीमार-सा दिखा कि, लिये-दिये पहुंची डाक्टरके पास! एक ओर डाक्टरकी दवा चलती और दूसरी ओर कभी स्वस्थ होने पर हनुमानजीको लड्डू चढ़ानेकी मिन्नत मानी जाती तो कभी सत्यनारायणकी कथा सुननेकी। इस प्रकार मेरा रामलाल बचपनसे ही लाड़-प्यारसे रखा गया।

पर, आये दिन उसे छींक आया ही करती। कभी छींक, कभी खांसी और कभी ६-७ महीने पर बुखार भी। ५ वर्षका हुआ होगा कि, एक दिन उसने गलेमें दर्दकी शिकायत की। मेरी सास उसे गोदमें लादे पहुंची डाक्टरके पास और डाक्टरने उसे टांसिल बता दिया। २-४ दिन दवा चली। गलेका दर्द जैसे जानेका नाम ही न लेता। डाक्टरने कह दिया कि, टांसिलका आपरेशन करा लेना है। अब क्या था—हम सब चिंता-

सागरमें डूब गये। हमारी सासने उस दिन खाना-पीना ही छोड़ दिया और दिनभर देवताओंकी मन्नतें ही मानती रहीं। आपरेशन पूनामें कराना ठीक न समझकर हम लोग बच्चेको लेकर बम्बई गये और वहांके एक उच्चतम कोटिके सर्जनसे उनके निजी अस्पतालमें आपरेशन कराया। एक सप्ताह बाद बच्चेको लेकर हम लोग पूना लौटे।

आपरेशन तो हो गया; पर दो ही महीने बाद फिर बच्चेको जुकाम हो गया। यह ऐसा जुकाम था कि, जानेका नाम ही न लेता। दो-चार दिन बच्चा ठीक रहता कि, छींकें आने लगतीं और खांसने लगता। ऐसा लगभग २ वर्ष रहा होगा। अब बच्चा लगभग ७ वर्षका हो चुका था। एक दिन वह रोने लगा। बताया कान भारी लग रहा है। फिर डाक्टरके यहां! दवा चलने लगी। जब कुछ न बना, तो कानके विशेषज्ञके यहां ले गये। उनकी भी दवा महीनेभर चली। इसी बीच हम लोगोंको भास हुआ कि, वह कुछ ऊंचा सुनता है। यह भी कानवाले विशेषज्ञको बताया। उसने आश्वासन दिया कि, ठीक हो जायेगा। दो महीने बीतनेपर भी जब उसका सुनना ठीक न हुआ, तो फिर बम्बई ले आये। बम्बईमें भी एक महीने दवा चली। और, मेरा बच्चा बहरा घोषित कर दिया गया।

लाचार, हम सब पूना लौट आये। एक दिन एक रद्दी कागज वालेको मैंने पुराने अखबार बेचनेको बुलाया। अपना बंडल नीचे रखकर, वह मेरा कागज तौल रहा था कि, उसके बंडलमें बंधे 'आरोग्य' पर मेरी दृष्टि गयी। मैंने खींच लिया। देखा, पत्र मुझे बहुत जंचा। शामको जब पतिदेव घर आये, मैंने उन्हें 'आरोग्य' का चंदा भेजकर ग्राहक बन जानेको कहा। दूसरे ही दिन उन्होंने पत्रका चंदा भेज दिया।

'आरोग्य' चार-पांच महीने ही आया होगा कि, एक दिन विचार उठा कि, क्यों न 'आरोग्य-मंदिर' लिख कर मैं अपने बच्चेके कानके सम्बंधमें परामर्श लूं। मैंने पत्र लिखा। परिचयपत्र आया और साथ ही यह आशा पूर्ण एक पत्र भी।

प्राकृतिक-चिकित्सासे कुछ होगा, इस बातपर मेरी सास बड़ी सशंक थीं। पर, मैंने उन्हें समझाया कि, "बच्चेके जीवनभरका प्रश्न है। इतना पैसा व्यय किया जा चुका है, क्यों न थोड़ा और खर्च करके देखूं?" इतना तो मेरी सास मान गयीं; पर अपने लाड़ले पौत्रको आंखोंसे ओझल करते उनकी जैसे जान ही निकल रही थी। अतः उनको भी साथ लानेका निश्चय हुआ।

हम लोग दीवाली बाद नवम्बरके महीनेमें गोरखपुर आये। सर्दी थी, पर इतनी नहीं कि, असह्य हो। खुली हवा और धूप दोनोंका ऐसा सान्निध्य हम शहरवालोंको और अफसरोंकी बीवियोंको कहां मयस्सर। हमारा वहां पहुंचनेका दिन निश्चित था, और आरोग्य मंदिरकी सूचना मिल चुकी थी, अतः हमारा कमरा निश्चित था। नौकरने वहां सामान रख दिया और धूप निकलते ही रामलाल सामनेके मनोरम बागमें जाकर दौड़ने लगा। दादीने तो अपने कांचके पोतेपर कपड़े लाद रखे थे, पर धूपकी तेजीमें वह स्वयं बागमें ही उनको फेंकने लगा।

९ बजेके लगभग डाक्टर मेरे कमरेमें आये। बोले—"आप लोग आ गयीं? कहां है बच्चा?" बच्चेकी दादी दौड़ी गयीं बच्चेको ले आयीं। उस वक्त वह खाली कमीज पहने था। वह रास्ते भर बड़बड़ाती आ रही थीं कि, "देखो न, बदमाशको, कपड़े उतारकर खेल रहा था। सर्दी रोज जकड़े न रहती, तो और नंगे घूमता।" मोदीजीने मुस्कराकर कहा—"घबराइए नहीं, यहां जुकाम नहीं होगा और होगा भी तो चला जायेगा।" मेरी सास डर रही थी कि, मोदीजी उसके कानको किसी कष्टद रूपमें देखेंगे; पर मोदीजीने कान देखा ही नहीं और चिकित्सा शुरू कर दी।

उसके भोजनमें पहले ही दिनसे एकदम परिवर्तन हो गया। दूध और चीनी बिस्कुट मिठाई बंद कर दी गयी। सुबह एक अमरूद, तीसरे पहर आध पाव मोसम्मीका रस और दोपहरमें पकी सब्जी। मोदीजीने

कहा—एक दिन, दो दिन चलने दीजिए। दो दिन बाद उसे, दोपहर-शाम दलिया-सब्जी मिलने लगी। ऐसा लगभग १० दिन चला होगा, फिर उसे रोटी-सब्जी मिलने लगी।

उसकी चिकित्सा शुरू हुई पेटपर मिट्टीकी पट्टी और एनिमासे। उसके बाद कभी पूरे बदनकी गीली पट्टी, कभी भाप-स्नान और कभी पूरे बदनका गर्म स्नान दिया जाता।

इस प्रकार शरीरका शोधन किया जा रहा था और रोगके कारण को ही दूर किया जा रहा था। उसका सत्: फल मिला, बच्चा अच्छा होने लगा।

लगभग १ मास बादसे ही उसे रुपयेमें आठ आने लाभ मालूम होने लगा। पर, हम तो पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ तक ठहरनेको कटिबद्ध थे और।२।। मास बाद हम वहांसे रामलालको पूर्ण स्वस्थ लेकर लौटे।

अब मेरा बच्चा १४ वर्षका है—पूर्ण स्वस्थ, बड़ा तेज खेलनेमें भी और पढ़नेमें भी।

—श्रीमती पद्मा सिंह

: १८ :

मैं परवश दौड़ता था

उस समय मेरी अवस्था ३५ वर्षकी थी। साधारण गृहस्थ जीवन व्यतीत कर रहा था और स्वास्थ्य भी ठीक ही था; पर कुछ दिनों बाद सदमें और परेशानियोंके कारण स्वास्थ्य बिगड़ गया। भूख कम होती गयी, कब्ज रहने लगा और नींद भी कम आने लगी। एक वर्षमें हालत इतनी बिगड़ गयी कि, चलना-फिरना कठिन हो गया। सबसे बड़ी कठिनाई तो यह थी कि, रातको सोते समय मैं चीखने-चिल्लाने लगता और उठकर दौड़ने लगता। चाहकर भी दौड़ना बंद नहीं कर पाता। मै चीख रहा हूं, यह जानते हुए भी चीखना बंद नहीं कर पाता, दौड़ते-दौड़ते और चीखते-चीखते हांफने लगता, शरीर थककर चूर हो जाता फिर, निढाल होकर गिर पड़ता। इसके लिए मैंने तरह-तरहके इलाज कराये। एलोपैथी इलाज करवाया, वैद्यकी दवाइयां ली, होमियोपैथीकी दवाइयां लीं, पर किसीसे कोई लाभ नहीं हुआ। शुरूमें एलोपैथीसे कुछ लाभ-सा प्रतीत हुआ क्योंकि वे लोग नींदकी दवा दे देते जिससे नींद आ जाती और चिल्लाना-दौड़ना बंद हो जाता; पर शीघ्र वह दवा भी बेकार होने लगी और दुगुने जोरसे चीखने-दौड़नेकी क्रिया आरंभ हो गयी। मैं हर तरफसे निराश होकर बैठ गया था कि, एक दिन एक मित्रने प्राकृतिक चिकित्सा और आरोग्य-मंदिरके बारेमें बताया, इन्होंने आरोग्य-मंदिरसे प्रकाशित कुछ साहित्य भी पढ़नेको दिया। जिन्हें मैं धीरे-धीरे पढ़ गया। मुझे लगा कि, इस चिकित्सासे मैं अच्छा हो सकता हूं, पर कहां गोरखपुर और कहां नांदेड़। दो दिन और तीन रातका रास्ता!

इतनी दूर जानेकी हिम्मत ही नहीं हो रही थी; पर जब किसी तरह से राह नहीं मिली, तो फिर गोरखपुरकी राह पकड़ी और यहां पहुंच गया। मेरी हालत वहां एक डरे हुए पशुके समान थी कि., कहां आ गया। पर, जब चिकित्सकसे मिला, उन्होंने मेरी बात शांतिसे सुनी और प्यारसे मेरे सिरपर हाथ फेरा तो मेरा डर गायब हो गया और मैं आश्वस्त हो गया और लगा कि, इस चिकित्सककी चिकित्साद्वारा मैं जरूर ही अच्छा हो जाऊंगा।

चिकित्सा शुरू हुई। सुबह-शाम पांच-पांच मिनटका कटिस्नान देकर टहलनेको भेजा जाता।

सुबह नाश्तेमें फल और दोपहर-शाम रोटी-सब्जी दी जाती।

तीन-चार दिन सुबह आध घंटेके लिए पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी रखी गयी और फिर एनिमा दिया गया। फिर तो पेट स्वयं साफ होने लगा और पेट साफ होने लगनेपर शरीरमें शक्ति बढ़ी, खून बनने लगा और शरीरमें स्फूर्ति आयी। पहले दिन एनिमासे बहुत-सा मल निकला पेट हल्का हो गया। उसी दिन रातको बहुत अच्छी तरहसे सोया, न चीखा, न दौड़ा और आश्चर्यकी बात यह है कि, दो महीनेमें आरोग्य-मंदिरमें रहा पर कभी भी सोते समय चीखने या दौड़ने की घटना नहीं घटी। मेरा स्वास्थ्य धीरे-धीरे सुधरता गया। आत्मविश्वास बढ़ गया, डर दूर हो गया।

यहां मुझे आसन और कसरतें भी सिखायी गयीं और करायी गयीं। शुरूमें तो इनके करनेमें कुछ कठिनाई मालूम होती, पर शीघ्र ही इनके करनेमें आनंद आने लगा।

सप्ताहमें मुझे तीन दिन, दिनके दस बजे सारे शरीरकी गीली पट्टी दी जाती, जिसमें तो मैं सो ही जाता और जब उठता तो लगता कि, मैं रात भर १२ घंटे सोया रहा हूं। इससे मुझे बडी ताजगी और स्फूर्ति मिलती।

दो सप्ताह बाद मेरे भोजनमें सुबह फलके साथ दूध और रोटी-सब्जीके साथ घी जोड़ा गया। इस भोजनने रसायनका काम किया और मेरी शक्ति बहुत बढ़ गयी।

आरोग्य-मंदिरमें अनेक प्रांतोंसे तरह-तरहके आदमी आये थे, जिनसे मैं बातें करता। उनके साथ भोजन करता और साथमें टहलने भी जाता जिससे मन बहला रहता। पता ही नहीं चला कि, दो महीने कब बीत गये। वहांसे मैं पूर्ण स्वस्थ होकर लौटा और वहां सीखे नियमोंपर एक वर्षतक चलते रहकर अपना वजन १५ पौंड बढ़ाया। मेरा शरीर भर गया है और व्यक्तित्व प्रभावकारी हो गया है।

अब जिससे मिलता हूं और घनिष्ठता हो जाती है, तो उन्हें स्वस्थ रहनेकी विधि बताता हूं और स्वयं उसी राहपर चल रहा हूं।

—श्री उपेंद्र व्यास

: १९ :

दवाके रोग

प्राकृतिक चिकित्साने मुझ मुरझाये व्यक्तिमें जीवनका संचार किया। वात यह है कि, मैंने २७ दिसम्वर १९६९ को अपने वढ़े हुए फोतेका आपरेशन कराया। आपरेशनके पूर्व मुझे कई जहरीले इंजेक्शन दिये गये। आपरेशनके वाद भी कई सूइयां लगायी गयीं। घाव सुखाने-के लिए कई ऐंटीवायोटिक दिये गये। यदि सूइयोंके नाम गिनाऊं, तो एक लम्बी सूची ही बन जायेगी। इसका वहुत बुरा असर मेरे शरीरपर पड़ा। ८ जनवरी १९७० को मुझे आंव आया और वुखार होने लगा। पुनः मैंने अंग्रेजी दवा लेकर उसे शान्त किया; लेकिन शान्ति अधिक दिन नहीं रह सकी। मुझे पुनः १ फरवरीको आंव आने लगा। मैंने एलोपैथीकी एक दवा 'सल्फा-कुइनो वेल' खाया। अव मुझे कव्ज रहने लगा। खुल-कर पाखाना नहीं ही होता था। ६ फरवरीसे ऐसा होने लगा कि, खानेके वाद बेचैनी हो जाये। चित्त हमेशा अस्थिर रहने लगा। भोरमें कम-जोरी वेहद वढ़ जाती थी।

मैं वेचैन होकर उसी डाक्टर साहवके पास जिन्होंने आपरेशन किया था, गया। उन्होंने मेरा रोग कृमिके कारण वताकर कुछ दवाएं दे दीं; लेकिन रोगमें कुछ परिवर्तन नहीं हुआ। तव मुझे आरोग्य-मंदिरकी याद आयी; क्योंकि मैं एक दिनके लिए १९४८ ई० में आरोग्य-मंदिरमें आया था। वहांके निर्देशपर चलकर मुझे लाभ भी हुआ था। मैंने मोदी जीके पास पत्राचार किया; लेकिन उत्तर आया भी नहीं था कि, मैं कम-जोरी वढ़ती देखकर मोतिहारी शहरके एक पुराने डाक्टर श्री एस० के०

वर्माके पास चला गया। यह ५-३-७१ की बात है। लगभग एक माहके इलाजके पश्चात् कुछ शक्ति तो आयी; लेकिन ८-४-७१ को मुझे शरीरमें जलन होने लगी। जलन पहले हाथोंमें शुरू होती और दोपहरके खाने के कुछ देर बाद होती। दो-तीन दिनोंके बाद समूचे शरीरपर जलनका दौरा आने लगा। तब मैंने रोगका पूर्ण इतिहास लिखकर मोदीजीके पास भेजा। १६-४-७१ को मुझे जलन इस कदर उत्तरोत्तर वृद्धि कर गयी कि, ऐसा मालूम पड़ा कि, उस दिन ६ बजे मेरा प्राणान्त ही हो जायेगा। मोदीजीके उत्तरकी प्रतीक्षा अभी कर ही रहा था कि, मेरे पुत्रने मुझे पटना जानेका परामर्श दिया। वे पहले मोतिहारी सदर अस्पतालके डाक्टर श्रीकृष्णस्वरूप शर्माके पास ले गये। श्रीशर्माजी एक कुशल एवं अनुभवी डाक्टर हैं; हमारे लिए उन्होंने कुछ भी उठा नहीं रखा। एक महीनेके इलाजमें मेरा कुछ खून बढ़ा, जलन कम हुई; लेकिन १ फर्लांग चलनेपर भी हाँफकर बैठ जाना पड़ता था। मुझे १५-५-७१ को फिर चेहरेपर थोड़ी जलनका अनुभव हुआ। तब मैंने अपने ज्येष्ठ पुत्र कुमार आनन्द-प्रकाशजीसे १५-५-७१ के अपराह्न ३ बजे कहा—"बबुआ, इतना खर्च हुआ; लेकिन हमें जलन फिर महसूस हो रही है। आरोग्य-मंदिर गये बिना मेरा कल्याण संभव नहीं है।" अस्पतालके नारकीय जीवनसे मेरा जी ऊब चुका था। चारों ओर देखनेपर नारकीय दृश्य दृष्टिगोचर होता था। कराह और चिल्लपोंकी आवाजसे नींद हराम हो जाती। मच्छरोंका राज, बेहद गर्मी और कभी-कभी पंखा बन्द हो जानेपर ऐसा लगता कि, मरना अच्छा। सफाईका तो वहां नाम भी नहीं है!

जानेकी बातें तय हुईं, आर्थिक समस्याओंपर विचार कर और कुछका प्रबन्धकर, १६-५-७१ को अपराह्नमें चलकर १७-५-७१को मैं आरोग्य-मंदिरकी चहारदीवारीके भीतर ६ बजे संध्या समय पहुंच गया। १८-५-७१को प्रात: मोदीजीसे मिलकर रोगका सारा विवरण प्रस्तुत किया। मेरे रोगके मुख्य लक्षण थे—नाड़ी और हृदयकी गतिका तेज होना। प्रति

मिनट १०० से भी ऊपरकी गति थी। अत्यन्त कमजोरी, सिरदर्द, कई बार पाखाना जाना; लेकिन साफ पाखानाका न होना, अंगोंमें झटका आना।

डाक्टर साहबने बतलाया कि, आपका यह हृदयरोग नहीं; बल्कि वायु बढ़ जानेका परिणाम है। पहले दिन पेटपर मिट्टीकी पट्टी और एनिमा, इसके बाद कभी गर्म-ठण्डा कटिस्नान, कभी समूची देहकी गीली मिट्टी दी जाती। कभी वाष्पस्नान, कभी पैरोंका गर्म नहान कभी धूपनहान और कभी मालिश भी दी जाती रही। रीढ़स्नान और मेहन-स्नान मेरे कार्यक्रमके मुख्य कार्यकलाप थे। दस दिनोंके बाद मुझे आराम मालूम होने लगा। मैं सदा मोदीजीसे मिलता और स्नेहसिक्त बातोंसे ही ऐसा मालूम पड़ता कि, मुझे रोग है ही नहीं— अगर पीड़ा है भी, तो जानेमें अब देर नहीं है। मेरी चिकित्साकी खूबी यह रही कि, जहां कइयोंको मेरे समक्ष इक्कीस दिनोंका उपवास कराया गया, वहां मुझे एक दिन उपवास नहीं कराया गया। और, साधारण भोजनपर ही मैंने रोगको भगा दिया। मेरा भोजन था : प्रात: बेलके गूदेका पानी कुछ दिन खाया, फिर खरबूजा और पावभर दूध लेता। दूधमें २ चम्मच शहद डाल लेता। दोपहर-शाम रोटी-सब्जी खाता। रोगको भगानेमें दृढ़ संकल्प, विश्वास और अटूट लगनकी आवश्यकता पड़ती है। प्राकृतिक चिकित्सा तो चिकित्सा नहीं; बल्कि एक जीवन-पद्धति और तपस्या है, जिसका अनुसरण कर कठिन-से-कठिन रोगको भगाया जा सकता है। देर होती है; लेकिन अंधेर नहीं होती। इस चिकित्सासे मुझे और कई छोटे-मोटे रोग भी भागते नजर आये।

आरोग्य-मंदिरसे चलते समय आरोग्य-मंदिरका वातावरण और साथियोंका आत्मीय व्यवहार आकर्षित कर रहा था। संसारका यह नियम है कि, मिलन और बिछुड़न होता ही रहता है; लगभग ४० दिनों-तक रहकर २५-६-७१ को संध्या ६ बजे विदा लिया। घरपर भी चिकित्सक द्वारा बताये नियमोंके अनुसार दो महीनेतक स्नानोंको चलाकर

बीमारीसे मुक्त हुआ। अभी चार-पांच मील टहलता हूं। प्राकृतिक भोजन करता हूं। बस ६-७ बजे कुछ फलोंका जलपान और दोपहर तथा संध्या ६-७ बजे रोटी-सब्जी।

अब काफी उमंगका अनुभव करता हूं। इस चिकित्सा-पद्धतिपर चलाकर कइओंको रोगमुक्त किया है। जटिल रोगियोंको आरोग्य-मंदिर जानेका परामर्श देकर भी उनकी रोग-मुक्तिम सहायता पहुंचायी है।

—श्री गगनदेव सिंह

: २० :

पेटका कष्ट

सात अक्तूबर १९५० से मैं फर्रुखाबादके जिला-परिषद्-चिकित्सा-लयमें काम कर रहा हूं। इस बीच लगभग ५ वर्षों तक मैंने वैद्य-इंचार्ज-के पद पर भी काम किया है। फिर इस समय भी १. जुलाई. १९७९ से मैं वैद्य-इंचार्जके ही रूपमें काम कर रहा हूं।

१९६४ में जिला-परिषद्से छुट्टी ले कर एक इंटर-कालेजमें—उसे प्रोत्साहन देनेके विचारसे—मैंने संस्कृत अध्यापनका भी काम किया।

मेरा अधिकांश विद्यार्थी-जीवन संस्कृत-पाठशालाओंमें ही बीता है और मैंने सदैव अपनी कक्षामें वरीयता प्राप्त की है। एक वर्षमें दो-दो परीक्षाएं भी मैंने दी हैं और क्रमशः प्रथम और द्वितीय श्रेणीमें उत्तीर्ण हुआ हूं।

चिकित्सालयमें काम करते हुए भी मैं प्रतिवर्ष एक परीक्षा देता रहा।

चिकित्सालय तथा अध्ययनमें अत्यधिक परिश्रमके फलस्वरूप मेरा पेट खराब रहने लगा। और, १९५६ से मुझे इस कष्टसे विशेष परी-शानी रहने लगी। अब मेरे मलमें एक चिकना पदार्थ निकलने लगा। उसे आंव मानकर मैंने अपनी आयुर्वेदिक चिकित्सा शुरू की। मैं जानता था कि, पेटके विकारके लिए अन्य पैथियों में कोई कारगर चिकित्सा नहीं है।

मेरे अन्य कितने ही मित्र वैद्योंने मेरी बड़ी सहायता की और बड़ा सहयोग किया। श्री पीताम्बर दत्त बी० आई० एम् एस्० (हरद्वार) ने तो इस सहृदयतासे अपना समय तथा सहयोग दिया कि, आजीवन आभारी रहकर भी मैं उनसे उऋण न हो पाऊंगा।

पर, इतनी चिकित्सा और इतनी सतर्कताके वावजूद, ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, रोगकी स्थिति भी गम्भीर होती गयी और अन्यान्य उपद्रव भी सामने आते गये—यथा अपच, वायु-विकार, आध्मान, जलन, कब्ज, तथा चिड़चिड़ापन आदि।

आयुर्वेदमें असफल होनेपर, मेरे उक्त परमहितैषी वैद्य-महोदयने होमियोपैथी या एलोपैथी आजमानेकी सलाह दी। कानपुरके एक विख्यात होमियोपैथकी चिकित्साम मैं दो माह रहा; परन्तु स्वास्थ्यमें सुधार शून्य ही रहा।

इसके बाद हैलेट-अस्पताल, कानपुरके एक सुविज्ञ चिकित्सकके यहां अपने एक डाक्टर मित्रके माध्यमसे पहुंचा। उक्त चिकित्सकने मेरा परीक्षण किया तथा अपना नुस्खा लिख दिया। पर, यह भी कह दिया कि, दवा तो मुझे आजीवन खानी पड़ेगी। अपने चिकित्सक मित्रसे उक्त विशेषज्ञकी बात सुनकर मुझे वड़ी निराशा हुई। पर, मैंने दवाएं खरीदीं और अपने घर लौट आया।

पूरा बृतान्त सुननेके बाद मेरे कृपालु मित्र श्री पीताम्वर दत्त जी ने अब मुझे प्राकृतिक चिकित्सा करानेकी सलाह दी और 'आरोग्य-मंदिर' जानेको कहा। उन्होंने ही मोदी जीसे मेरा पत्र-व्यवहार कराया और मोदीजीका आश्वासन भरा पत्र पाते ही, २ जुलाई १६७८ को मैं अपने एक निकटतम सम्बंधी श्री रामनारायण चतुर्वेदीके साथ आरोग्य-मंदिर आ गया।

श्री मोदी जी जब वहां मिले तो उन्होंने बड़े स्नेह से मेरी सारी कहानी सुनी और वड़ी शान्ति पूर्वक प्रसन्नमुद्रामें मुझे आश्वासन देते हुए बोले कि, आप निश्चय ही यहां से पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ करके जायेंगे।

उसी दिनसे मेरी चिकित्सा प्रारम्भ हो गयी और पूरे चिकित्सा-कालमें आवश्यकतानुसार नानाविध चिकित्साएं दी गयीं—यथा पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी, एनीमा, गरम-ठंडी सेंक, वाष्प-स्नान, सारे बदनकी

गीली पट्टी, धूप-स्नान, मालिश आदि। इसके साथ ही पथ्य रूपमें सात्विक भोजन चालू हो गया।

मैं यहां एक प्रसंग और बताना चाहूंगा। आरोग्य-मंदिरमें मेरे आनेके दूसरे ही दिन—अर्थात् ३ जुलाई को—प्रातः जब अन्य रोगियों-को देखते हुए मोदी जी मेरे कमरे में आये तो मेरे रोगकी चर्चा चलने पर उन्होंने कहा—"शास्त्री जी, मैं आपको एक बात बता दूं। आपके मल-में जो चिकना पदार्थ आता है, वह आंव नहीं, पित्त है। यह बात मैं अपने ४० वर्षों के अनुभवके आधार पर कह रहा हूं और आपको इस दृष्टिसे बता रहा हूं कि, आप भी पेशेसे वैद्य हैं और आपको जानकारी हो जाने पर आपके माध्यमसे अन्य व्यक्तियोंका भी भला हो सकता है।" श्रद्धेय मोदी जीका यह वचन मुझे आजकी अक्षरशः याद है। मैं उसी समय समझ गया कि, मेरे वैद्य मित्र तथा डाक्टर कहां गलती करते रहे थे।

तदन्तर उपचार चलता रहा तथा श्री मोदी जीके कथनानुसार वह चिकना पदार्थ पित्त ही सिद्ध हुआ। और, मैं आरोग्य-मंदिरमें मात्र २७ दिन इलाज करानेके बाद २९ जुलाई १९७९ को पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ करके घर लौट आया।

मैं अब भी सात्विक भोजन करता हूं और निश्चय कर लिया है कि, ऐसा ही सात्विक भोजन आजीवन करता रहूंगा; क्योंकि इस भोजन पर मेरा जैसा स्वास्थ्य आज है, वैसा कभी नहीं रहा। भगवान् श्री कृष्णने गीताके सत्तरहवें अध्यायमें कहा है:

आयु सत्त्ववला रोग्य सुख प्रीति विवर्धनाः। रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्विक प्रियाः ॥८॥ कट्वम्लः लवणात्युष्णतीक्ष्ण रूक्ष विदाहिनः। आहाराः राजसस्येष्टाः दुःखशोकामय प्रदाः ॥९॥

यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्। उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामस प्रियम् ॥१०॥

—आयु, बुद्धि, बल, आरोग्य, सुख और प्रीतिको बढ़ाने वाले एवं रसयुक्त, चिकने और स्थिर रहने वाले तथा स्वभावसे ही मनको प्रिय आहार पदार्थ सात्त्विक पुरुषको प्रिय होते हैं।

और कड़वे, अम्ल, लवण युक्त और अति गरम तथा तीक्ष्ण रुखे और दाहकारक एवं दुःख चिन्ता, और रोगोंको उत्पन्न करने वाले आहार राजस पुरुषको प्रिय होते हैं।

जिसे रखे रात बीत गयी हो, जिसका रस समाप्त हो गया हो, जो दुर्गंन्धयुक्त हो, बासी हो, उच्छिष्ट हो, तथा जो अपवित्र हो, ऐसे आहार तामस पुरुषको प्रिय होते हैं।

यहां भगवान्‌ने सात्त्विक, राजसिक तथा तामसी आहारकी विवेचना करते हुए सात्त्विक भोजनको सुख प्रीतिकर तथा राजसी एवं तामसीको दुःख शोक और रोगका कारण बताया है।

मोदी जी प्राकृतिक चिकित्सा सिखाते हैं। अतः, मैं अपने इस लेखके पाठकोंसे अनुरोध करूंगा कि, वे अपने सम्बंधित महानुभावों और परिवार-के प्रौढ़ व्यक्तियोंको प्राकृतिक चिकित्सासे अवश्य अभिज्ञ करायें ताकि भावी पीढ़ी स्वास्थ्य कर भोजन, संयम और व्यायामका ज्ञान प्राप्त कर और व्यवहार कर स्वस्थ रहे।

—श्री रामाधीन शास्त्री

: २१ :

आँखकी रोशनी

लगभग ६ साल पहले की बात है। वर्षा शुरू हो रही थी। रातको विजलीकी रोशनीमें भी आंखसे काम लेना दुशवार हो गया। ज्यों-ही पढ़ने-लिखनेका काम उठाता, १५-२० मिनटोंमें ही आंखें भारी हो जाती और आंखोंसे पानी टपकने लगता।

'सीतापुर' आंखके अस्पताल'की स्थानीय शाखामें जाकर आंख दिखायी। महीने-डेढ़ महीने वहांकी दवा भी की; पर कोई लाभ न हुआ। सीतापुर गया और वहां मैंने अपनी आंखकी जांच करायी। अजब बात यह थे कि, दिनमें मुझे कोई दिक्कत न थी और न मेरी आंख खराब निकली। डाक्टरोंकी राय हुई कि, अंदरकी किसी नसमें गड़बड़ी हो जानेसे रातवाली यह दिक्कत है। डाक्टरोंने कहा कि, इसे ठीक करनेके लिए लगभग ३ माह चिकित्सा करानी होगी और सप्ताहमें एक बार अस्पताल आनेको कहा।

पूरे ३ महीने सप्ताहमें एक बार मैं वहां जाता रहा; लेकिन किंचित् लाभ न हुआ।

अब हमारा ध्यान प्राकृतिक-चिकित्साकी ओर गया। 'आरोग्य-मंदिर' के डाक्टर विट्ठलदास मोदीकी सहज कृपा मेरे ऊपर सदासे रही है। मैंने उन्हें पत्र लिखा, तो मनमें शंका यही बनी रही कि, आंखोंके कष्टमें प्राकृतिक-चिकित्सा भला क्या करेगी ?

लेकिन मोदीजीने मुझे बुला लिया और अब हमारे मनमें आशाकी एक ज्योति दिखायी पड़ी। मैं तुरंत गोरखपुर गया और आरोग्य-मंदिर-

में भरती हो गया। 'आरोग्य-मंदिर' का नया भवन उस समय बन कर तैयार ही हुआ था। उसे देखकर तबीयत प्रसन्न हो गयी—कितना साफ-सुथरा, हवादार, आरामदेह और चिकित्सा-कार्यके लिए उपयुक्त।

यह नवम्बरका महीना था। मैं 'आरोग्य-मंदिर' में मात्र एक सप्ताह रह सका—इतने दिनोंमें ही ५०-६० प्रतिशत लाभ मेरी आंखोंको हो गया। लौटकर १५-२० दिन वही क्रम मैंने घरपर चलाया। बस इतनेमें ही मेरी आंखें पूर्ण स्वस्थ हो गयीं।

अब मुझे इस बातके लिए अफसोस होने लगा कि, 'काश! मैं प्रारंभमें ही 'आरोग्य-मंदिर' गया होता, तो, इतना धन और समय न बरबाद हुआ होता और मैं इतने दिन कष्ट न भोगता।

चिकित्सामें प्रातः-सायं मुझे कटिस्नान मिलता और सुबह-शाम टहलना। भोजनमें केवल मोसम्मी या संतरा था। और, चिकित्सामें प्रायः सारे बदनकी गीली पट्टी मिलती। आंखोंकी कसरतके अतिरिक्त आंखोंके लिए कोई स्थानीय चिकित्सा नहीं हुई।

प्राकृतिक-चिकित्साका सिद्धांत है कि, हर रोगका कारण शरीरमें विजातीय द्रव्यका एकत्र होना है—इसे तो मैंने देख लिया कि, आंखको छुए बिना, आंखकी रोशनी बिना किसी दवा-दारूके लौट आयी।

प्रकृति-माताकी कृपासे मेरी आंखको रोशनी तो मिली ही, अन्य छोटी-मोटी तकलीफें भी विदा हो गयीं। तबसे आजतक मेरी आंखमें कोई कष्ट नहीं हुआ।

—श्री रतनप्रसाद अग्रवाल

: २२ :

पेशाब आने लगा

मुझे विगत जून मासमें एक दिन जुकाम हो गया। उसके बाद मूत्र-कृच्छ हो गया तथा एक सप्ताह बाद एक दिन बिलकुल पेशाब होना वन्द हो गया। तव मेरे जामाता श्रीलालता प्रसाद तथा मास्टर नृसिंह-प्रसादने जिला चिकित्सालय मिर्जापुरमें ले जाकर कैथेटर द्वारा पेशाब निकलवाया। उसके बाद स्वाभाविक रूपसे पेशाब आना एकदम बन्द हो गया; अतः मैंने वाजारसे एक कैथेटर खरीद लिया और उसीसे पेशाब निकाल लिया करता था। उसके तीसरे दिन जाकर जिला-चिकित्सालय-में भर्ती हो गया। वहां के डाक्टर साहव ने कहा कि, आपका प्रोस्टेट ग्लैण्ड बढ़ गया है वह विना आपरेशनके अच्छा नहीं हो सकता। वहां ३ दिन रहनेके वाद डाक्टर साहवने कहा कि आपको कैथेटर फिट कर दिया जाता है उससे वूंद-वूंद पेशाब निकलता रहेगा, इस प्रकार महीने दो महीने जियोगे भी, और आपरेशन कर दूंगा तो इतनी कमजोरी है कि तुरन्त मर जाओगे। इसपर मैंने कहा कि डाक्टर साहब कृपा करके मुझे कैथेटर न फिट कराइये; क्योंकि इस प्रकार जीनेसे मरना ही वेहतर समझता हूं। मुझे आप अपने भाग्यपर छोड़ दीजिए। इसके बाद वहांसे अपने स्थानपर चला आया। वहां एक दिन विश्राम करनेके नाद अपने जामाता को साथ लेकर २२ जूनको आरोग्य-मंदिर, गोरखपुर प्रस्थान किया। 'आरोग्य-मंदिर' का परिचय मुझे "आरोग्य" मासिक पत्र-द्वारा पहले से ही ज्ञात था। ता० २३ जूनको प्रातःकाल "आरोग्य-मन्दिर" पहुंचनेपर ज्ञात हुआ कि वहांके चिकित्सक डा० श्री विट्ठलदास मोदी

कहीं बाहर गये हैं। जो कि कलतक आ जायेंगे। कार्यालयमें पहुंचनेपर वहांके असिस्टेन्ट डा0ने मेरी हालत सुनी और कहा कि आप घबरायें नहीं, आठ-नौ दिनमें आपको पेशाब अपने आप आने लगेगा। इसके बाद विवरण-पत्रिकापर मेरा रोग, चिकित्सा एवं भोजन अंकित करके खण्ड व के ८ नं0 कमरेमें ठहरा दिया। कहना नहीं होगा कि दसवें दिन २ जुलाईको विना आपरेशनके प्राकृतिक चिकित्सासे अपने आप पेशाब आना प्रारम्भ हो गया। जिसको कि जिला-चिकित्सालयके डाक्टरने यह कहकर जवाब दे दिया था कि, विना आपरेशनके अच्छा नहीं हो सकता। उस दिनसे कैथेटर लगाना बन्द हो गया जिसे कि मैंने कुल १७ दिन लगाया था।

वहां मेरी चिकित्सा-पद्धति यह थी— प्रातः-सायं कटिस्नान दस दस मिनट। फिर १० बजे दिन मिट्टीकी पट्टी पेड़ूपर और गुदापर। तत्पश्चात् एनिमा। एनीमाके बाद शौच, स्नान एवं भोजन। भोजनमें प्रातः एक पाव मोसम्मीका रस तथा दोपहरमें दलिया और सब्जी। ५ दिन यह आहार-क्रम चलानेके बाद उसे बन्द करके रसाहार कर दिया फिर, जब पेशाब आने लगा तब ५ बारमें पांच पाव दूध जिसमें एक पाव दूध तथा एक पाव पानी मिलने लगा। फिर आगे चलकर पानी एक पावकी जगह आधा पाव कर दिया गया। वहां मोदीजी मुझपर अत्यन्त प्रेम रखते थे सूचना पाते ही तुरन्त मेरे पास पहुंच जाते थे। अतः मैं अपने जीवनमें इन्हें कभी नहीं भूल सकता।

—श्री नारायणदास चतुर्वेदी

: २३ :

खुजली

मेरा विवाह २६ साल पहले मेरठ जिलेके एक ग्राममें हुआ था। शादीके कुछ ही साल वाद मुझे कब्ज रहने लगा और यह रोग इतना बढ़ गया कि कभी-कभी मुझे दो-दो तीन-तीन दिन शौच नहीं होता था। पहले तो मैंने किसीको कुछ वताया ही नहीं, पर वादमें कभी-कभी पंसारी-की दुकानसे कोई दवा मंगाकर पी लेती थी। इसी प्रकार कई साल और गुजर गये और रोग ज्यों-का-त्यों रहा। मुझे सारे वदनमें गर्मी और खुजली मालूम पड़ने लगी। मेरा स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन गिरने लगा। मैं हर वक्त थकी-थकी रहने लगी। घरमें वड़ा परिवार था इसलिए कामसे भी छुट्टी नहीं मिलती थी। जव कभी रोग वढ़ जाता और वुखार आ जाता तो मेरे पति मुझे लेकर शहर चले जाते और मैं वहां डाक्टरोंसे इंजेक्शन लगवाकर और दवायें लेकर वापस लौट आती। उस समय इस चिकित्सासे कभी कुछ आराम हो जाता, कभी नहीं। इसी प्रकार कुछ और साल निकल गये और मेरा स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन विग-ड़ता ही चला गया, कमजोरी अधिक, भूख कम लगती और परिवारके वढ़ते रहनेके कारण काम अधिक, इन परिस्थितियोंमें शरीरने लगभग जवाव दे दिया।

पांच साल पहले एक और रोग मुझे लग गया। सारे वदनमें वहुत तेज खुजली उठने लगी, जैसे ही मैं खुजलाती, खाल मुलायम हो जाती और उसमेंसे पानी-सा निकलने लगता और त्वचापर सूजन आ जाती। कभी-कभी सारे वदनमें सूजन और खुजली होती और मवाद-सा निकलने लगता। वुखार भी हो जाता। इसके लिए भी पहले मुझे

आराम नहीं होता, तो मेरठ डाक्टरोंके पास ले जाया जाता और महीनों इंजेक्शन लगवाये जाते और गोलियोंपर गोलियां खिलायी जातीं। कभी-कभी उनसे आराम भी मालूम पड़ता पर शीघ्र ही रोग उभर आता। मेरे परिवारवाले भी मेरे रोगसे और मुझसे परेशान हो चुके थे। मेरे पति मेरा इलाज करवायें या अपनी जीविकाका काम करें। लंबे-चौड़े परिवारकी देखभाल कौन करें? रिश्तेदार भी कबतक मेरे पास रहकर मेरी सहायता करते? रुपया भी हर साल काफी खर्च होता। डाक्टर काफी आशा बंधाते और एकसे निराश होकर मेरे पति दूसरे डाक्टरका इलाज बदलवाते। फिर कई डाक्टरोंका इलाज राय मिलाकर चलाया जाता; पर नतीजा कुछ नहीं होता। मैं अपने जीवनसे ऊब चुकी थी। अपने छोटे-छोटे बच्चोंकी फ़िक्र थी कि, इनका क्या होगा? मेरे परिवारवालोंने और मेरे पतिने मेरी जिंदगीकी आशा छोड़ दी थी। मैं सोचती थी कि, इस जिंदगीसे तो मेरा अंत हो जाय तो अच्छा होगा। शायद मेरे परिवारवाले भी यही सोचते थे। मेरा शरीर कटकर कोढ़-सा बहता था।

मेरे देवर सरकारी नौकर हैं। उन्होंने कई वार मेरे पतिको सलाह दी कि, मुझे कब्जके कारण ही यह सब है और तकलीफ वढ़ रही है। डाक्टरोंके इलाजसे कुछ नहीं होगा। उन्होंने सलाह दी कि, अब प्राकृतिक चिकित्सा करायी जाय। उस समय वे पूर्वी उत्तरप्रदेशके गोंडा जिलेमें इंजीनियर थे और आरोग्य-मंदिर, गोरखपुरके संपर्कमें आ चुके थे। पर मेरे पतिने एक न सुनी और मेरा डाक्टरी इलाज कराते रहे। नतीजा जो होना था हुआ। मेरा कष्ट वढ़ता ही गया।

लगभग छह माह पहले मेरे देवर एक शादीमें सम्मिलित होनेके लिए छुट्टी लेकर घर आये और मेरी दशा देखी। वे मुझे अपने साथ लेकर आरोग्य-मंदिर, गोरखपुरमें दाखिल करानेके लिए ले जाने लगे। परन्तु, मेरी दशा ऐसी नहीं थी कि, रेलद्वारा लम्बा सफर कर सकूं।

मेरे पति मुझे भेजनेको तैयार भी नहीं हुए। हां, उन्होंने डाक्टरी इलाज छोड़कर हकीमोंका इलाज कराना मान लिया। मुझे लेकर सब लोग मेरठ गये और वहांपर चार अच्छे हकीमोंसे मशविरा किया गया और मेरा इलाज शुरू हुआ। मुझे हर सप्ताह मेरठ ले जाया जाता और दिखलाकर व दवाइयां लेकर वापस लाया जाता। लगभग तीन महीने मेरा इलाज हुआ और कुछ आराम भी मालूम हुआ। लेकिन, कुछ ही दिनोंमें फिर वही हालत हो गयी। तमाम बदनके ऊपर जख्म हो गये और खुजली बुरी तरह हो गयी। सब लोग हर तरहके इलाजसे थक चुके थे। मैं मौतकी घड़ियां गिन रही थी। इसी समय मेरे देवरने मुझे जबरदस्ती अपने पास बुलवा लिया।

२४ मईको मेरे देवर और देवरानी मुझे लेकर आरोग्य-मन्दिर, गोरखपुर पहुंचे। आरोग्य-मन्दिर, उसके चारों तरफका खुला मैदान और हरियाली देखकर तबियत खुश हो गयी। दूसरे दिन सुबह चिकित्सकने मेरी परीक्षा की और आशा दिलायी कि, दो माहमें रोगपर काबू पा लिया जायगा। मुझे आरोग्य-मन्दिरमें दाखिल कराकर मेरे देवर दूसरे दिन गोंडा वापस चले गये और मेरी देवरानी मेरी देखभालके लिए मेरे पास रह गयीं।

डाक्टर साहबने शुरूके दिनसे ही मुझे सिर्फ खरबूजा खानेको दिया। पानी दिन रातमें डेढ़-दो-सेरतक पीनेको कहा। उसी दिनसे सुबह-शाम पांच-पांच मिनटका कटिस्नान दिया जाने लगा, जो रोज दो मिनट चढ़ाकर पंद्रह-पंद्रह मिनट सुबह-शाम लेने लगी। नलकूपके ठंढे पानीसे कटिस्नान लेनेसे शरीरकी जलन तुरंत बंद होती और बड़ी राहत मिलती। शुरूके तीन दिन, दिनके दस बजे पेड़ूपर मिट्टी रखी जाती और एनिमा दिया गया। चौथे रोज सारे बदन-पर गीली ठंढी मिट्टी खूब लगायी गयी, पांचवें दिन सारे बदनकी गीली पट्टी दी गयी। करीब एक सप्ताहतक मुझे एक रोज सारे बदनपर मिट्टी व एक रोज सारे बदनकी गीली

पट्टी दी जाने लगी। आठवें रोज मेरे हाथों और पैरोंमें जख्म हो गये और मवाद, खून बुरी तरह बहने लगा। प्राकृतिक चिकित्सामें इस हालत-को उभार कहा जाता है। बदबू जख्मोंमें से इस कदर आती थी कि, कोई मेरे कमरेके पाससे भी नहीं निकलता था। पर, इस दशामेंभी चिकि-त्सालयकी नर्सें मेरी उचित चिकित्सा करतीं। इन जख्मोंपर डाक्टर साहबने पानीकी पट्टी भिगो-भिगोकर रात-दिन लपेटनेको कहा। इसके लिए नर्सोंका इंतजाम था। दिनमें तो जो नर्सें रहती थीं, वही बारी-बारीसे करती थीं। एक नर्सका इंतजाम चिकित्सालयकी ओरसे शाम को छह बजेसे लेकर सुबहके छह बजेतकके लिए किया गया था। वह सारी रात पानीमें पट्टी भिगो-भिगोकर लपेटती रहती थी। इस हालतमें बुखार भी रहता और वह १०२° से १०४° के बीच रहता। करीब आठ रोजमें मेरे जख्म ठीक हो गये। मवाद, खून बहकर निकल गया और ज्वर भी उतर गया। जख्म ठीक होनेपर शीघ्र ही नयी खाल आनी शुरू हो गयी। इस बीचमें मुझे ज्यादातर मिट्टीकी पट्टी और एनिमा दिया जाता। कभी सारे बदनकी गीली पट्टी और वार्म बाथ भी दिया जाता। चार-पांच दिनतक मुझे बड़ा आराम रहा। मैं खूब चैनकी नींद सोई फिर मुझे खूनी आंव शुरू हो गया। दिन-रातमें दस-पंद्रह बार दस्त होता और हर बारमें एक-डेढ़-छटांक आंव खून जाता। यह हालत करीब दस-बारह रोज रही। हर रोज सेर-सवा-सेर आंव शरीरसे निकल जाता। डाक्टर साहब बड़े खुश थे कि रोग अपने आप निकल रहा है। मैं कमजोर बहुत हो गयी, घबराकर डाक्टर साहबसे आंव रोकनेको कहती पर वह कहते कि अपने आप ही रुकने दीजिए। यह आपका रोग निकल रहा है इसे रोकना ठीक नहीं है। इस समय मेरा खरबूजा खाना बंद कर दिया गया और रोज मैं तीन पाव मोसंबीका रस तीन बारमें एक-एक पाव करके लेती। इस हालतमें ज्यादातर मिट्टीकी पट्टी पेड़ू पर और एनिमा दिया जाने लगा। धीरे-धीरे आंव

आना बंद हो गया और मैं बिलकुल ठीक हो गयी। दस्त ज्यादा आनेकी वजहसे मेरी गुदा बहुत दुःखती। इसके लिए मैं गुदापर गीली मिट्टी रखकर बैठती। धीरे-धीरे यह भी बिल्कुल ठीक हो गयी। आंव बंद होनेपर तीन-चार दस्त अपने आप काले रंगके बहुत भारी तादातमें हुए जिसके बाद भूख बड़े जोरोंकी लगी। अब मुझे चावल पानीमें खीरके समान पतला पकाकर बिना नमककी तरकारीके साथ दिया गया। पहले तो मैं डरी कि बिना नमककी तरकारी खायी कैसे जायगी पर खानेपर बिना नमककी तरकारी बड़ी स्वादिष्ट मालूम हुई। फिर तो मुझे धीरे-धीरे दलिया, रोटी, तरकारी सब मिलने लगी और ठीक तरह पचने लगी। दिनमें दो बार बंधा दस्त होता। एनिमाकी जरूरत नहीं रही। अब मैं धीरे-धीरे बिना थके सुबह शाम दो ढाई मील घूमने लगी। वजन भी करीब-करीब मेरा तेरह पौंड कम हो गया था, वह बढ़ने लगा। अबतक मुझे डेढ़ माह हो गया था और मैं बिलकुल ठीक हो गयी थी। हमने डाक्टर साहबसे छुट्टी मांगी और उन्होंने मुझे खुशी-खुशी घर जानेकी आज्ञा दी और आगे का जीवन क्रम समझा दिया। डेढ़ महीने आरोग्य मंदिरमें रहनेके बाद मुझे सब बातोंका ज्ञान हो गया था। क्या खाना चाहिए, कैसे जीवन व्यतीत करना चाहिए। यह सब मुझे डाक्टर साहबने व्यक्तिगत रूपसे तो बताया ही पर अधिक ज्ञान मुझे डाक्टर साहबके भाषणोंसे मिला। वे सप्ताहमें दो दिन आरोग्य-मंदिरके स्वास्थ्यार्थियोंके लाभार्थ भाषण देते हैं और उनकी शंकाओंका समाधान करते हैं।

घर आकर वजन और शक्तिकी वृद्धि मुझमें शीघ्रतासे हुई और एक महीनेमें मेरा वजन आठ पौंड बढ़ गया। स्वास्थ्य क्या है? उसका आनंद क्या है यह मैं भूल ही गयी थी। अब मैं स्वास्थ्यका आनंद पूरी तरह ले रही हूं। घरका खान-पान बदलकर मैंने स्वास्थ्यकारक कर दिया है। आरोग्य-मन्दिरमें मैंने स्वास्थ्य ही नहीं पाया, स्वस्थ रहने और स्वास्थ्य बनाये रखनेकी कला भी सीखी। जब मैं अपने पहले कष्टको सोचती हूं तो प्राकृतिक चिकित्सा मुझे एक चमत्कार ही मालूम पड़ती है। मिट्टी-पानी-धूप हवामें कितनी शक्ति है! —श्रीमती रुक्मिणी वर्मा

: २४ :

पित्तनली बंद थी

माल विभागमें कार्य करते हुए लगभग २ मासका समय व्यतीत हुआ था कि, २६ अप्रैल सन् १९७१ को अकस्मात् मेरी छातीमें दर्द शुरू हुआ। दर्द धीरे-धीरे बायें हाथकी ओर भी बढ़ने लगा। एलोपैथीके डाक्टर श्री ओमप्रकाश शनावरने इसे हृदय-रोग बताया। चिकित्सा आरम्भ की गयी। कुछ इंजेक्शन व गोलियाँ देकर लगभग १२ घंटेमें दर्दपर काबू पाया गया। दर्द तो शान्त हो गया; परन्तु मेरे पेटकी बायी ओर वाला भाग भारी रहने लगा। कस्बा देवबन्दमें कई डाक्टरों, हकीमों-का इलाज करवाया; परन्तु मर्ज ज्यों-का-त्यों बना रहा। इसके पश्चात् मैंने विभागसे अवकाश ले लिया तथा सहारनपुरमें दर्जनों विख्यात डाक्टरों, हकीमों, वैद्योंका ६ माहतक इलाज करता रहा; परन्तु मर्ज टससे मस नहीं हुआ। एलोपैथीके एक डाक्टरने तो मुझे जी भरकर लूटा। उसी समय कसबा बड़ौतमें एक विख्यात डाक्टर को दिखाया, जिसने काम-पर पुनः लौट जाना ही मर्ज का एक मात्र इलाज बताया; परन्तु दवा तब भी दी गयी। मैंने मेरठ सिविल अस्पताल, दिल्ली-स्थित आल इंडिया मेडिकल इस्टीट्यूट तथा विलिंगडन अस्पताल आदिमें भी रोगकी जांच करायी। टट्टी, खून, पेशावकी बार-बार कई जगह जाचें हुईं, दिल व फेफड़ोंके एक्स-रे लिये गये; परन्तु कोई बीमारी तसखीश नहीं हो पायी। पेटमें जलन और वायु बढ़ती गयी और मेरी हालत गिरती गयी। सारांश यह है कि, ज्यों-ज्यों दवा की गयी, मर्ज भी बढ़ता ही गया।

डाक्टरोंके परामर्शपर मैं १४ जनवरी सन् ७२ को काम पर लौट आया और कार्य करने लगा। साथ ही इलाज भी चलता रहा। इस बीच कसबा नकुड़ जिला सहारनपुरके कई डाक्टरों, हकीमोंसे इलाज कराया। इन्हीं लोगोंके परामर्शपर पेटका पुनः एक्स-रे कराकर जमनानगर (हरियाणा)में एक आपरेशनके विशेषज्ञ डाक्टर हलवर्टसे मशवरा किया, जिन्होंने पेटमें पित्त नलीका वन्द होना वताया तथा आपरेशन ही एक मात्र इलाज वताया। मेरी बीमारी इस बीच इतनी बढ़ी कि, मैं चलने-फिरनेसे भी लाचार हो गया तथा विवश हो मुझे पुनः अवकाश लेना पड़ा। इस बीच मेरे लिए अच्छी वात यह रही कि, मेरी मजबूरीको देखते हुए सब-डिविजनल मैजिस्ट्रेट तथा तहसीलदार नकुडने कामके कम होनेपर भी मेरे साथ सख्ती नहीं बरती।

मजबूर होकर अवकाश लेकर मैं रुड़की चला आया। यहां भी मैंने अपना इलाज करवाया परन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। अन्तमें एक सज्जनने, जो रुड़की यूनिवर्सिटीके अस्पतालमें कम्पाउंडर हैं, (उनका नाम श्री-जयचन्दजी है) मुझे प्राकृतिक चिकित्साके लिए आरोग्य मंदिर, गोरख-पुर जानेकी सलाह दी। मेरे सामने समस्या थी कि, मझे गोरखपुर कौन ले जाय। मेरी आर्थिक स्थिति भी ठीक नहीं थी। अतः मुझे मेरे सम्बंधी घर ले गये तथा छोटे-मोटे वैद्यों, डाक्टरोंका इलाज करवाते रहे। पर लाभके स्थानपर मेरी हालत गिरती गयी। इस इलाजके साथ-साथ भूत-प्रेत भगाने वाले साधुओं और मौलवियोंको भी दिखलाया गया; परन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। उदरकी भयंकर जलनसे मैं इतना दुःखी था कि, 'आत्महत्या' तक की सोचने लगता था।

मैंने १५ जून १९७२ को दवा खानेसे इनकार कर दिया तथा 'आरोग्य-मन्दिर, गोरखपुर' जानेका दृढ़ निश्चय कर लिया। इस समय मेरा वजन ७५ किलोग्रामसे गिरकर केवल ३७ किलोग्राम रह गया था। १९ जून ७२ में मैंने आरोग्य-मंदिरकी शरण ली। श्री विट्ठलदास मोदीजीने

मेरी रोग-परीक्षा की एवं इलाज शुरू हो गया। तीन महीने तक मिट्टी-की पट्टी, सारे बदनकी गीली पट्टी, कटिस्नान, रीढ़-स्नान, पैरोंका गरम नहान, गर्म-ठण्डा कटिस्नान, सूर्य-किरण-चिकित्सा, मालिश आदि बारी-बारीसे दिया गया। १५ दिनका उपवास देकर मुझे जीवन-दान दिया गया, खाने-पीने, रहने-सहने, आराम-कसरत, आसनोंके बारेमें सप्ताहमें २ दिन होने वाली गोष्ठीमें बताया गया।

अस्पतालके कितने ही सेवक मेरी आंखोंके सामने अब भी ऐसे दीखते हैं जैसे कह रहे हों—बाबू "क्या हुक्म है, "क्या सेवा करें"। ३ माह आरोग्य मंदिरमें रहनेके बाद मैं घर चला आया तथा प्राकृतिक चिकित्सा-का सहारा लेकर इलाज करता रहा। अब मैं पूर्ण रूपसे स्वस्थ हूं तथा तहसील रुड़कीमें कार्य कर रहा हूं।

—श्री महाबीर सिंह

२५ :

नशेकी आदत

बचपनसे मुझे कसरत करनेका शौक हो गया, धीरे-धीरे पहलवानी करनेका। घरमें गाय भैंस और अच्छी खेती होनेकी वजहसे मेरे पहलवान बननेमें कोई बाधा न पड़ी। पहलवानोंमें शामिल हो गया और पहलवानोंमें मेरा नाम हो गया।

सन् १९५९ में जब मैं तीस वर्षका था, वह मेरी पहलवानीका अत्युत्तम वर्ष था। मेरी कुश्ती लोग दूर-दूरसे देखने आते। शरीर भी मेरा देखने लायक था। जिस रास्ते जाता, लोग मुझे ऐसे देखते, जैसे मस्त हाथी जा रहा है। पर इसी समय मैं गलत रास्ते पड़ गया। पान खाने लगा, पानके साथ जर्दा खाने लगा। दिन-रातमें पचास पान तो खाने ही पड़ते। कुछ दिनोंमें मैंने इन पानोंके साथ ५० ग्राम गांजा और दो तोला भांग और जोड़ ली। कहते शर्म आ रही है। ब्राह्मण हूं; पर न कहूं तो आप कैसे जानेंगे कि, मैंने अपने शरीरको अपने हाथों कितना बिगाड़ा। मैं एक बोतल सस्ती शराब भी रोज पीने लगा। इन दुर्गुणोंके साथ दुर्गुणी दोस्त भी मिले। मैं जुवा भी खेलने लगा। इधर मैं जुवाके पीछे रात-रात भर जागता, मेरा शरीर टूटने लगा। भोजन कम हो गया, कसरत चली गयी और जहां मैं पहलवानीमें मशहूर था, वहां 'नशेबाज पंडित' के नामसे मशहूर हो गया। नशेबाज पंडितका घर पूछ लीजिए, पचास कोसके लोग आपको मेरे घर पहुंचा जायेंगे।

नींदकी कमी और नशेकी ज्यादतीने रोग न्योते। कब्ज रहने लगा, वायु होने लगी, नींद चली गयी। आये दिन सर्दी-जुकाम होने लगा और दमेने आ घेरा। मेरे लिए चार फलांग भी चलना मुश्किल हो गया। हांफता हुआ किसी तरह अपनेको घसीटता। सीढ़ी तो चढ़ ही नहीं सकता। खाटपर पड़ा रहता, नशा खाता रहता और दवा लेता रहता। हितमित्रोंने भी वड़ा उत्साह दिखाया, अच्छे-अच्छे डाक्टर-वैद्य लाये, लाभ क्या होना था। दिलकी धड़कन और वढ़ गयी। लगा, प्राण वचाना मुश्किल है।

एक दिन मास्टर चतुर्वेदी तवला-वादक पधारे। वे मेरे मित्र हैं। मैं भी तवलेका मास्टर हूं। कई वार उनकी मुझसे तवलेपर झड़प हो चुकी है। मुझसे वड़ा प्रेम रखते हैं। मेरी जो शकल उन्होंने देखी तो चकरा गये। वड़े दुःखी हुए और आरोग्य-मंदिर जानेकी राय दी। वे अपना इलाज आरोग्य-मंदिरसे कराकर अपने स्वास्थ्यको उसी लाइनपर साधे हुए हैं। विना दवाकी प्राकृतिक चिकित्साका परिचय दिया, तो मुझे चक्कर आने लगे। पर, उनके प्रेमके कारण और उत्साह दिलानेपर मैंने आरोग्य-मंदिरसे पत्र-व्यवहार किया और वहांसे आज्ञा आनेपर आरोग्य-मंदिर पहुंचा। रात हो गयी थी। मैं जानता था कि, आरोग्य-मंदिरमें क्या होगा और क्या खानेको मिलेगा, सो मैं रास्ते भर पान खाता आया और वाहर फाटककर पर रुककर गांजेके दो दम लगाये, अचार, पूड़ी-मिठाई, आम जो साथ लाया था, खा गया। और, आरोग्य-मंदिरके अंदर दाखिल हुआ। पहरेदारने फाटक खोला और रातकी ड्यूटीपर लगे डा० चौधरीको वुलाया, जिन्होंने मेरे सोनेका प्रवंध किया। यह सत्रह नवम्बर सन् १९७३ की वात है। यह रात मुझे भूलती नहीं है; क्योंकि इसी रातके वाद मेरे जीवनका मेरे लिए तव अनजाना प्रभात शुरू होता है।

सुवह नौ वजे आरोग्य-मंदिरके संचालक श्री विट्ठलदास मोदी

और डा० कृष्णमुरारीमोदी मिले। मोदीजीका सरल स्वभाव और डा० कृष्णमुरारीका मुस्कराना देखकर तो जी जुड़ा गया। लगा कि, मैं देवताओंकी नगरीमें आ गया हूं। विस्तारसे मेरा हाल पूछा गया, मेरी परीक्षा हुई। मैं पूछ नहीं सका कि, मेरे बचनेकी उम्मीद है क्या; पर मैं मोदीजीकी तरफ देखता रहा। उन्होंने मेरे प्रश्नको मेरी आंखोंमें पढ़ लिया। बोले, "पंडितजी घबरायें नहीं। आप डेढ़-दो महीनेमें बिल्कुल अच्छे हो जायेंगे और फिर पहलवानी करेंगे। बस एक सप्ताह मेरा साथ दीजिए, सातवें दिन मैं आपको अपने साथ तीन मील टहलाऊंगा।" उनकी बात सुन कर मुझे हंसी आ गयी; पर विश्वास नहीं हुआ। मैंने मन-ही-मन कहा—"हे ! ईश्वर मोदीजीकी बात सच्ची निकले।"

मेरी चिकित्सा शुरू हुई। भोजनमें मैं सुबह २५० ग्राम पका अमरूद, चबा-चबाकर आध घंटेमें खाता। दोपहर-शाम मुझे चोकरसमेत आटेकी रोटी और हरी उबली सब्जियां दी जातीं। उन्हें भी खूब चबा-चबाकर खाना पड़ता। सुबह-शाम मैं तीन मिनटका कटिस्नान लेकर थोड़ा टहलता। दिनके दस बजे मेरे पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी आध घंटे लिए रखी जाती और फिर एनिमा दिया जाता। यहांका भोजन मुझको तीन दिन तो अखरा; फिर यह भोजन खूब सुस्वादु लगने लगा। पेट साफ होने और इस सात्विक भोजनके कारण नशेकी तलब भी कम हो गयी। उस समय आरोग्य-मंदिरमें ८० रोगी थे। मैं उन्हींसे घिरा रहता और अपनी औपन्यासिक जिंदगीके किस्से मजे ले-लेकर सुनाता रहता। कुछ उनकी भी सुनता। नशेबाजोंके साथ मैंने नशा पकड़ा था, यहां इस सात्विक वातावरणमें उसे छोड़ना सीखा। बता दूं, मेरे ट्रंकमें गांजा-भांग सब कुछ था और इरादा भी था कि, बहुत कष्ट होगा तो उनका उपयोग भी करूंगा; पर उनकी तरफ ध्यान देनेकी नौबत ही नहीं आयी। मैं आरोग्य-मंदिरके वातावरणमें रम गया।

सातवें दिन मोदी साहबने मुझे अपने साथ लिया और अपने नित्यके कार्यक्रमके अनुसार प्रातः घूमने निकले। उन्हें भी मैंने कुछ किस्से सुनाये, उन्होंने मुझसे मेरे बारेमें बहुत-कुछ पूछा भी और धीरे-धीरे भोजन छोड़नेकी बात बताने लगे। डेढ़ घंटेमें जब मैं उनके साथ लौटा, तो मैं उपवासके महत्त्वको समझ चुका था। उपवास करनेको मेरे मनमें ठन चुकी थी। यह इसलिए कि, इन सात दिनोंमें ही मुझे अपार लाभ हुआ था, बड़ा कफ निकला, हांफना कम हुआ, चलना आसान हुआ, नींद भी आने लगी।

आठवें दिन मेरा उपवास शुरू हुआ। दोपहर तक तो मैं बड़े आरामसे रहा; पर शामको इस बिना दवा और भोजनके इलाजसे मैं घबराया, तो भइया मुरारीजीने मुझसे बात की। उन्होंने समझाया। और, धीरज बंधाया। मेरा उपवास चल निकला।

उपवास-कालमें दिनमें दो सेर पानी पीता, कभी-कभी नीबूका थोड़ा रस भी पानीमें निचोड़ लेता। इस समय एनिमा मुख्य चिकित्सा थी। उसने बड़ा सहारा दिया। रोज टट्टी होती। बीस दिन मेरा उपवास चला और इन बीस दिनोंमें दो किलो टट्टी मेरे पेटसे जरूर निकली होगी। मैं अचरज करता कि, जब खा नहीं रहा हूं, तो यह टट्टी आ कहांसे रही है और हर रोज एनिमाके बाद मैं अपनेंको बेहतर पाता। बीसवें दिन तो शरीर इतना हल्का और फेफड़े इतने साफ लगे कि मैं, कोस भर दौड़ सकता था।

अब मुझे थोड़ा फलका रस दिया गया, चौथे दिन फल। तीन दिन बाद शुरूके भोजनपर मैं आ गया। दोनों समय रोटी-सब्जी लेने लगा; पर अब तो उस सादे भोजनमें जो आनंद आया, उसकी क्या बखान करूं?

अब मैं बिल्कुल ठीक था। घर जानेका समय आया, आरोग्य-मंदिरसे बिलगाव सोचकर दुःख व्याप्त हो गया। मंदिर समान आरोग्य-मंदिर जिसने मेरे प्राण बचा लिये मुझे स्वस्थ कर दिया और रास्ते-पर लगा दिया। मैं इन सबका चिर ऋणी हूं। सचमुच किसीके पुण्य फल जागते हैं, तभी वह आरोग्य-मंदिरका परिचय पाता है और वहां पहुंचता है। —श्री रामशरण प्रसाद गौतम

: २६ :

मृत्यु भय

मेरी उम्र इस समय ५७ वर्षकी है। आजसे २७ वर्ष पूर्व जब मेरी उम्र तीस वर्षकी थी मेरे जीवनमें एक ऐसी घटना घटी कि मुझपर मृत्यु-भय सवार हो गया। मैं कट्टर आर्यसमाजी हूं, ईश्वरके अस्तित्वमें विश्वास करता हूं; टोने, टमेरने, सयाने, सपारी, देवी-देवताओं तथा मूर्तिपूजनमें मेरा विश्वास नहीं है और ईश्वरकी कृपासे न मेरा कोई शत्रु ही है फिर भी मृत्युभय मुझे हो गया। घटना ही ऐसी है कि यदि मैं उसे आपको सुनाऊं तो आप कह उठेंगे कि हां, ऐसी अवस्थामें शक्ति-शाली मस्तिष्कके व्यक्तिको भी मृत्युभय हो सकता है। मेरी मानसिक अवस्था ऐसी हो गयी कि यदि मैं कोई कपड़ा खरीदूं तो लगता कि मैं अपना कफन खरीद रहा हूं,यदि लकड़ी खरीदूं तो लगता इन्हींमें मैं जलूंगा।

इस डर, भय और चितासे मुझे कब्ज रहने लगा, पाचनशक्ति दिन-प्रतिदिन क्षीण होती चली गयी, स्वभाव चिड़चिड़ा हो गया, बात-बातमें क्रोध आ जाता। भूख मारी गयी। धीरे-धीरे मैं अम्लपित्तका शिकार हो गया। पेटमें जलन रहने लगी और हृदयमें दर्द ठहर गया। अनिद्रा देवीने मुझे अपना दास बना लिया, एक घंटेके लिये भी सोना हराम हो गया। यदि नींद आयी भी तो इतनी भयंकर कि सोनेसे भी डर लगने लगा।

जबतक बच्चे नहीं थे तबतक मानसिक दशा कुछ ठीक भी थी, बच्चे होनेपर तो उनकी तरफसे मृत्युभय और उग्र हो उठा और वह बुरी तरहसे सताने लगा। भूख इतनी कम थी कि एक फुलका और लौकी या

तोरीकी थोड़ी तरकारी ही खा सकता था, परवलकी सब्जी खालूं तो वह भी नहीं पचती थी।

मैं स्वयं चिकित्सक हूं। सफल इतना कि इलाकेमें लोग मुझे पीयूषपाणि वैद्य कहते हैं पर मैं अपनी दवा करनेमें बिल्कुल असमर्थ था। अपने इलाजके लिए मैंने दुनियाभरके डाक्टर, हकीम, वैद्य, होमियोपैथके दरवाजे छान मारे, किसीने मेरे रोगको पेप्टिक अल्सर, किसीने गैस्ट्रिक अल्सर, किसीने ड्यूडनल अल्सर, किसीने एसिडिटी, किसीने हाइपर ऐसिडिटी बढ़ी बतायी पर किसीकी दवासे कुछ भी नहीं हुआ, मेरी गाड़ी जहां-की तहां अटकी रही और मैं छटपटाता रहा।

नीबू, मौसमी या संतरा मैं खा नहीं सकता था क्योंकि इनसे ऐसिडिटी बढ़ जाती थी जो पेटकी जलनको बढ़ाती थी। इस ऐसिडिटीने मेरे दांत खराब कर दिये, उसमें टीस चलती, मसूड़ोंसे मवाद आती। इस कष्टको दूर करनेके लिए मेरे डाक्टरने मेरी दस दाढ़ें निकलवा दीं। जीवन नीरस हो गया था, पर जी रहा था और बच्चोंके लिए जीना चाहता था। उनकी तरफकी अपनी जिम्मेदारीको समझता था—सोचता था कि यदि मैं न रहा तो ये अनाथ हो जायंगे। इन्हें और मेरी पत्नीको गली-गली भीख मांगनी पड़ेगी। बच्चोंकी दशा देखकर और उनका भविष्य सोचकर रुलाई आती रहती और रोते-रोते मेरी दृष्टि भी अति क्षीण हो गयी।

श्री शिवशरणजी मेरे मित्र और शुभचिंतक हैं। वे भी मेरे दुःखसे दुःखी रहते। उन्हें कहींसे १९५८ के आरोग्यके पूरे बारह अंकोंका पूरा सजिल्द सेट प्राप्त हो गया। उन्होंने उसे पढ़ना स्थगित रखकर पहले मुझे ही दे दिया। जिस दिन दिया वह तारीख मुझे पूरी तरह याद है क्योंकि वह दिन मेरे जीवनका चिरस्मरणीय दिवस है। वह दिन था १९ जुलाई १९६४। श्रीशिवशरणजी द्वारा दी गयी प्रतियोंको मैंने आद्योपांत पढ़ा। पढ़ा क्या, पढ़नेपर मजबूर हुआ। पढ़ना शुरू किया

कि मेरी जिज्ञासा बढ़ती गयी। प्राकृतिक चिकित्सासे मेरा यह पहला परिचय था। मैं वैद्य हूं ही, इस नयी वैद्यक विधिने मुझे खूब आकर्षित किया। आरोग्यसे ही मुझे आरोग्य मंदिरका परिचय मिला। मुझे प्रसन्नता हुई कि एक ऐसा प्राकृतिक चिकित्सा-केंद्र है जहां आरोग्यमें वर्णित और प्रतिपादित विधिसे रोगीकी चिकित्सा हो रही है। आरोग्य-मंदिरसे मैंने पत्र-व्यवहार किया, नियमादि मंगाये और चिकित्साके लिए अनुमति मंगाकर आरोग्य-मंदिर जानेका निश्चय किया। पर, आरोग्य-मंदिर पहुंचू कैसे ? शक्ति इतनी क्षीण हो चुकी थी कि अकेला जा नहीं सकता था। हार्ट पल्पिटेशन इतना बढ़ा हुआ था कि किसी समय भी हार्ट फेल कर सकता था। इसी समय सौभाग्यसे स्वामी केशवानंदजी महाराज (सच्चिदानंद आश्रम, वाराणसी) विचरते हुए मेरे यहां आ निकले। मैंने उन्हें अपने स्वास्थ्यकी स्थिति बतायी और मुझे आरोग्य-मंदिर पहुंचा देनेकी प्रार्थना की। ईश्वरकी कृपा, वे दयार्द्र हुए और इस संन्यासीने मुझ गृहस्थकी सेवा स्वीकार की और मुझ पूरी हिफाजतसे आरोग्य-मंदिर पहुंचा दिया।

आरोग्य-मंदिर पहुंचते ही आरोग्य-मंदिरके विशाल भवन, सुंदर वाटिकाको देखकर चित्त प्रसन्न हो गया। आशा जमी फिर चिकित्सकसे मिलकर और उनसे बातें कीं मन ठिकानेपर आ गया। फिर इस चिकित्सा-लयमें मेरे जैसे अनेक हैं वह देखकर धीरज भी बंधा।

चिकित्सा आरंभ हुई। पेड़ू पर मिट्टीकी पट्टी रखनेके बाद मुझे एनिमा दिया गया। भोजनमें सुबह-शाम फल और दोपहरको सादी-सादी रोटी और सब्जी मिली। धीरे-धीरे मुझपर सारे बदनकी गीली पट्टी, मालिश, भाप-नहानके भी प्रयोग किये गये। सुबह-शाम मैं कटिस्नान लेकर टहलता। एनिमासे नित्य बदबूदार मल और ऐसिडिटी निकलती।

आठ दिन बाद मुझे सुबह-दोपहर-शाम केवल फल मिलने लगे और

फिर आठ दिन बाद मुझे दिनमें केवल तीन बार मुसम्मीका रस मिलने लगा। तीन दिन बाद मुझे तीन दिनका उपवास भी कराया गया और फिर मुझे सुबह-दोपहर-शाम फल-दूध मिलने लगा।

आरोग्य-मंदिर पहुंचनेके एक सप्ताहके अंदर ही मुझे नींद आने लगी, कुछ भूख भी जगी और भोजनकी ओर रुचि उत्पन्न हुई। छातीकी पट्टीसे दिलकी दुखन, घबराहट तथा मृत्युभय दो सप्ताहके अंदर नौ-दो ग्यारह हो.गये।

सप्ताहमें दो-दिन होनेवाले चिकित्सकके ज्ञानवर्धक, प्रकाशप्रदायक, मधुर भाषण तथा उनके साथ होनेवाली नित्यप्रतिकी वातचीतसे 'जीने-की कला' तथा 'उठो!" पुस्तकसे और स्वास्थ्यार्थियोंके साथके मनो-रंजनसे मैं अपने रोगको भूल ही गया। शक्ति भी वढ़ी और मैं नित्य सुवह-शाम चार मील टहलने लगा।

अव घर याद आने लगा, वच्चे याद आने लगे, काम याद आने लगा और अपने रोगियोंकी सेवा याद आने लगी। यह सव यादें तो आयीं, पर आरोग्य-मंदिरको और आरोग्य-मंदिर वासियोंको छोड़नेको जी नहीं चाहता था। यह वियोग बड़ा दुःखदायी लग रहा था पर वह तो कभी होना ही था। मैं एक मास आरोग्य-मंदिरमें रहकर घर वापस आ गया। क्या मेरी हालत थी जब मैं गया था और कैसा सुंदर स्वास्थ्य बनाकर मैं लौटा। मेरी पत्नी, मेरे पड़ोसी मुझे देखकर वहुत ही प्रसन्न हुए।

—श्री आयुर्वेदरत्न भारद्वाज

: २७ :

मैं मां बनी

बचपनसे ही मैं कुछ मोटी थी। सोलह वर्षकी हुई तो मेरा वजन साठ किलो था और ऊंचाई सिर्फ चार फुट नौ इंच। इसी वजहसे मेरा विवाह होना कठिन हो गया। कई लोग मुझे देखने आये और मुझे उनकी नापसंदीके अपमानकी कड़वी घूंट पीनी पड़ी। बड़ी मुश्किलसे जब मैं उन्नीस वर्षकी हुई तो एक सज्जन युवकने कई तरहके दबावमें आकर मेरे साथ विवाह करना स्वीकार किया और मेरा विवाह हो गया। वे ओवरसियर हैं और घर भी बहुत अच्छा है। मेरे घरसे तो बहुत ही अच्छा! मेरे पिताजीकी तंगी और मेरे मोटापेसे डरकर मेरी मां मुझे सूखा-रूखा ही भोजन देती थीं; पर ससुरालमें मुझे आराम मिला और खानेकी सुविधा। फिर तो तीन वर्षमें मेरा वजन पचहत्तर किलो हो गया। मुझे इसकी परवाह नहीं थी; पर मेरा बढ़ता वजन देखकर मेरे पति चिंतित रहने लगे और अगले दो वर्ष तक मुझे कोई बच्चा नहीं हुआ, तो सबकी चिंता बढ़ गयी और आने-जानेवालोंमें तो कई कहने लगे कि, मेरे मोटापे-के कारण ही, मुझे बच्चे नहीं हो रहे हैं। मेरे पति भी यह महसूस करने लगे कि, मेरा वजन घटना चाहिए। इसके लिए उन्होंने प्रयत्न करने शुरू किये। मुझे सुबह अपने साथ टहलाने ले जाने लगे। भोजन कम करने-को कहते। कई तरहकी दवाएं भी आजमायीं; पर वजन किसी महीने एकाध किलो घट जाता और जरा-सी लापरवाही से वह फिर उतना ही बढ़ जाता। इसीमें दो वर्ष और निकल गये। अब मैं २५ वर्षकी थी और निःसंतान थी। इसी वक्त मेरे पतिने सुना कि, प्राकृतिक चिकित्सासे

वजन निश्चितरूप से घटता है और प्राकृतिक-चिकित्साका प्रबंध आरोग्य-मंदिरमें बहुत अच्छा है। मेरे पतिने आरोग्य-मंदिरसे पत्र-व्यवहार किया और वजन घटानेका आश्वासन पाकर मुझे वे आरोग्य-मंदिर पहुंचा गये।

नवंबरका महीना, जाड़ेके दिन थे। कोई साठ स्त्री-पुरुष चिकित्सा ले रहे थे, जिसमें अठारह स्त्रियां थीं। कोई दस स्त्री-पुरुष ऐसे थे, जो रोग-निवारणके साथ-साथ अपना वजन भी घटा रहे थे। मेरी समस्या केवल वजन घटानेकी थी। पहले दिन ही चिकित्सकने मुझे समझा दिया कि, हल्की चीजें खाना और अधिक श्रम करना वजन घटानेकी कुंजी है। उन्होंने मेरा भोजन सुबह फल और दोपहर-शाम रोटी-सब्जी, सलाद निश्चित किया। भोजनमें न चीनी, न घी, न तेल, न दूध, न दही। देखकर मैं सन्न रह गयी। इन्हीं चीजोंसे मेरा प्यार था। पर, जिस कामके लिए आये हैं, वह करना ही है; यह सोचकर मैंने हिम्मत बांधी। पर, दोपहरको भोजनालयकी टेबिलपर जो भोजन देखा, तो रोना आ गया। कच्ची गाजर, टमाटर, प्याजकी एक प्लेट, पनीली उबली तरकारियोंसे भरी दो कटोरियां और सूखा फुल्का। सब्जियोंमें नमक भी नहीं, नमक ऊपरसे मिलाया जा सकता था। हमारी टेबिलपर ही एक और दंपत्ति बैठे थे। उन्होंने यह भोजन बड़े शौकसे लेना शुरू किया। मेरे पतिने भी भोजन शुरू किया। पर, मेरेसे तो यह भोजन चलता ही न था। यह देखकर मेरी साथिनने मेरे लिए दो हरी मिर्चें मंगवा दीं। उनकी सहायता-से मैंने किसी तरह दो फुल्के निगले। सोचने लगी यह भोजत्त किया कैसे जायगा? और, जान कैसे बचेगी? सो मैंने अपने पतिसे घर वापस चलनेका इसरार करना शुरू किया। घरपर चक्की चलाने, ऐसा हीं खाने और वजन घटानेकी कसमें खायीं; पर वे राजी नहीं हुए। उनका कहना था कि, जितना वजन घटाना हो यहीं घटाना होगा, तब घर चलनेकी बात सोची जायगी। मेरे पति मेरा मन लगानेके लिए

मेरे साथ सात दिन रहे। इस बीच मेरा मन लग गया; क्योंकि वही भोजन जो पहले दिन मुझे इतना अप्रिय लगा था, वह स्वादिष्ट लगने लगा और मैं शौकसे सब्जी और सलाद खाने लगी। दोपहरको तो मैं केवल सलाद ही लेती और दो फुल्के और शामको दो फुल्के और सब्जी लेती। सुवह नाश्तेमें तीन-चार संतरे लेती या एक पावके करीब लाल टमाटर या एक पाव अमरूद। मोटापेके कारण कसरत मैं कोई कर नहीं सकती थी; अतः मुझे सुवह-शाम टहलनेको प्रोत्साहित किया गया। पंद्रह दिन-में मैं सुबह दो घंटे और शामको डेढ़ घंटे टहलने लगी। टहलनेमें कटि-स्नान वहुत ही सहायक हुआ। उसके बाद बड़ी स्फूर्ति आ जाती और टहलनेमें बड़ा आनंद आता। यह कटिस्नान मुझे दस-दस मिनटके लिए टहलनेके पहले दिया जाता। तेजीसे मैं टहल नहीं पाती, धीरे-धीरे टहलती। आरोग्य-मंदिरके चारों ओर खेत और खुली जगह है। उनके बीच टहलनेमें बड़ा आनंद आता। जाड़ा होने पर भी, लौटते वक्त मुझे पसीना आने लगता।

पहले महीने मेरा वजन ६ किलो घटा, यह देखकर चिकित्सकने शामको मेरे लिए रोटी-सब्जी बंद कर फल और एक पाव दूध कर दिया। दूसरे महीने मेरा वजन पांच किलो घटा, तीसरे महीने पांच किलो और चौथे महीने चार किलो। अब मेरा वजन ५५ किलो रह गया था। इस वक्त चिकित्सकने मेरा भोजन सुबह-शाम आध-आध सेर दूध और फल कर दिया और दोपहरको रोटी-सब्जी-सलादके साथ दो तोला घी जोड़ दिया। उनका कहना था कि, अब वजन नहीं घटना चाहिए। घटाना ही हो तो तीन महीने बाद प्रति मास एक किलो घटाना चाहिए। यह सुनकर मैंने अपने पतिको पत्र लिखा और वे मुझे आकर लिवा ले गये।

वजन घटानेमें वाष्प-स्नान बहुत सहायक होता है। वह मुझे प्रति सप्ताह दो बार दिनके दस बजे दिया जाता था। पर, वजन घटनेपर चमड़ा झूलने न लगे, अतः उसमें कसाव लानेके लिए सप्ताहमें दो दिन

मालिश और तीन दिन सारे वदनकी गीली पट्टी दी जाती थी। मेरा वजन तो आरोग्य-मंदिरके चार मासके निवासमें बीस किलो घटा ही, मेरा शरीर भी सुडौल हो गया और भोजनके प्रभावसे मेरा रंग भी निखर गया। ऐसी सलवण त्वचा मेरी कभी नहीं हुई थी। इसके वाद तो किसी भी सौंदर्य प्रसाधनके उपयोगकी मेरी इच्छा कभी नहीं हुई।

घर आकर मैंने अपना भोजन तो सात्विक रखा ही, मेरे पति भी यही भोजन करते। भोजन सादा होनेके कारण उसके वनानेमें भी कम समय लगता है अतः हम लोगोंके पास घूमने-फिरनेको वहुत समय रहता है।

हां, जब आरोग्य-मंदिरमें मेरा वजन दस सेर कम हो गया, तो मुझे वहां कई तरहकी कसरतें भी सिखायी गयी थीं। वह मैं नियमित रूपसे नित्य बीस मिनटतक करती हूं और जितनी फुरसत मिलती है, टहलती हूं। फल-तरकारी खरीदने तो नित्य स्वयं ही जाती हूं।

घर आये तीन मास भी नही बीते थे कि, मैं गर्भवती हो गयी और एक साल पूरा होते-न-होते मेरी गोदमें एक सुंदर शिशु आ गया। इसे हम लोगोंने ईश्वरकी कृपा और 'आरोग्य-मंदिर' का प्रसाद माना।

आज मेरा मोहन पांच वर्षका हो गया है और सरिता तीन वर्षकी। और, आज भी मेरा वजन पचपन किलो है। कभी एकाध किलो बीचमें वढ़ा देखा, तो मैं इसे हमेशा ५५ किलोपर ही ले आयी हूं। वजन वढ़ानेमें दो ही चीज सहायक होती है, चीनी और चिकनाई। चीनी मेरे घरमें आती ही नहीं और चिंकनाई हम लोग वहुत कम खाते हैं। कितनी बड़ी कुर्वानी है; पर उसका सुंदर फल भी तो हमें मिला है। मेरे आरोग्य-मंदिरसे आनेके वाद मैं या मेरे पति या मोहन या सरिता कभी बीमार नहीं पड़े।

—श्रीमती सुशीला गुप्ता

८

(२)

मानव स्वर्णिम संसारमें विचरण करता हुआ भी अतीतकी धूमिल स्मृतियोंको भूलनेमें असमर्थ रहता है। यह बात भी उन्हीं दिनोंकी है, जब मैं जीवनसे निराश हो चुकी थी। ऐसा लगता था, जैसे किसीने सब-की सब खुशियां छीन ली हों। सुख-शान्ति, चैन सब मुझसे रूठ गये थे।

मेरे विवाहको १५ साल हो गये थे; लेकिन शादीका मधुर फल, नन्हें-मुन्ने बच्चोंकी किलकारियोंसे मैं वंचित थी। घर जैसे खानेको दौड़ता। बच्चोंका अभाव शादीके बाद शुरू-शुरूमें तो कुछ इतना नहीं अखरता था; लेकिन ज्यों-ज्यों सालोंकी गिनती बढ़ती गयी, जीवन थम गया, कुछ परिवर्तनकी चाहना बेताब करने लगी। बच्चेके अभावने मेरे अन्दर हीनभावना उत्पन्न कर दी। मैं किसीके बच्चेको प्यार करनेसे कतराती, मनमें एक शंका-सी बनी रहती कि, कहीं कोई मेरे प्यारको गलत न समझ बैठे। मैं चाहते हुए भी अपनी देवरानीके बच्चोंको प्यार न करती कि, तबियत और मचलेगी, अभाव ज्यादा खटकेगा, तमन्ना और उभरेगी।

मैंने इलाज भी बहुत कराये। जब कभी भी किसी अस्पताल या प्राइवेट डाक्टरके पास जाती, तो वह कुछ-न-कुछ कह दवा करनेपर मजबूर कर देते। और, मैं बेबसीके कारण दवाइयों-पर-दवाइयां इस्तेमाल करती रही। मेरे दो भाई हैं और वे मिलटरीमें आफिसर हैं—एक स्कार्डन कमांडर है, तो दूसरा करनल। वे भी अपने पास मुझे बुलाकर मिलिटरी अस्पतालमें मेरा इलाज कराते रहे।

दो-तीन बार तीन-तीन मासका कोर्स भी दवाइयोंका किया। पति भी प्रत्येक प्रकारसे सम्पन्न होनेके कारण, मुझे प्रायः कहीं-न-कहीं दिखाते रहते। जो भी कोई मित्र उन्हें किसी प्रकारका सुझाव देता, वह मुझसे वैसा करनेको कहते। मैंने मन्दिरोंमें, गुरुद्वारोंमें भी मन्नतें मांगी। तीर्थ भी कुछ-एक किये। मेरा मासिक धर्म भी ठीक न था। कभी कुछ देर बाद

होता तो कभी कई महीने रुककर आता। जवतक तो में दवाई करती, टीके लगवाती, तो मासिक धर्म सुचारु रूपसे होता; लेकिन ज्यों ही दवा छोड़ती तो स्थिति फिर वैसी-की-वैसी बन जाती। मैं भी एक हदतक सब्रका दामन थामे, प्रभुपर विश्वासकर दवादारू करती रही। लेकिन, फायदा पूरा न हुआ, वह ऐसे कि दो-तीन वार उमीदवारी तो हुई; परन्तु ज्योंही दो-तीन मास वीतते, गर्भपात हो जाता। एक वार तो मैं पांच महीने विस्तरपर ही पड़ी रही कि, किसी प्रकार मेरे दिन पूरे निभ जायें; लेकिन 'मेरे मन कछु और' होता और 'कर्त्ताके कछु और।' घरमें अकेले होनेके कारण मैं परहेज भी पूरा न कर पाती। जिसका नतीजा यह हुआ कि, मेरा पेट हर गर्भपातमें फूलता गया। दूसरी बार जिस्ममें भी चर्वी आ समायी। और, इस तरह जब बदन भारी होता गया तो मैं जहां चिंतित हुई, वहां मेरे पति भी कुछ कम चिंतित न थे। मेरे पतिने जब देखा कि, इन अंग्रेजी दवाइयोंसे तो कुछ खास बना नहीं, तो एक दिन वह डाक्टर विट्ठलदास मोदीजी लिखित 'रोगोंकी सरल चिकित्सा' नामक पुस्तक बाजारसे मेरे लिए खरीद लाये। किताबमें मोटापेपर भी लेख था, जो मैंने भी पढ़ा। और, मेरे पतिने भी कई बार मुझे पढ़कर सुनाया। पढ़ना और समझना एक बात है, उसपर आचरण करना और व्यवहारमें लाना दूसरी और बहुत कठिन बात है। वातावरण का प्रभाव भी एक रुकावट था। जो मुझे पूर्ण रूपसे इस प्राकृतिक चिकित्सा-पद्धतिको अपनाने न देता था।

उन्हीं दिनों हरियाणाका झगड़ा चल रहा था, मेरे पतिने एक ब्रांच रोहतकमें खोल ली और उसकी देख-भालके लिए वह स्वयं वहां चले गये। जब वह मुझे रोहतक ले गये, तो एक दिन कहने लगे, "मैं तो कारोवारी आदमी हूं, मेरा इससे निजात पा कहीं जाना वड़ा मुश्किल है। मेरी मर्जी है कि, तुम स्वयं ही हिम्मत कर गोरखपुर पहुंच जाओ और वहां 'आरोग्य-मंदिर'में रह पूर्णरूपेण स्वास्थ्य प्राप्त कर लो।" उन्होंने श्री

मोदीजीको पत्र लिखा और मेरे आनेकी सूचना दे दी। डाक्टर साहब भी पत्र-व्यवहारमें बड़े कुशल हैं। शीघ्र ही पत्रोत्तर आ गया और आनेकी अनुमति भी दे दी। बस फिर क्या था—मैं रोहतकसे देहली, देहलीसे लखनऊ और वहांसे छोटी लाईनद्वारा गोरखपुर सुबह पहुंच गयी। वहांपर जब मैं डाक्टर साहबके लिए प्रतीक्षा कर रही थी, तो 'आरोग्य-मन्दिर' की भव्य इमारत, विशाल फूलों-पत्तियोंसे सजा यह बाग देखकर तो एक बार मुझे ऐसे लगा कि, मैं कश्मीरके निशात-बागमें विचरण कर रही हूं। रोगियोंके रौनकवाले चेहरे, हंसती-कूदती हुई त्यागकी देवियां, यह नर्सोंका झुंड, ढ़ेरसे फलों और सब्जियोंके बेचनेवाले, काफीसे ज्यादा नौकर, सब कुछ बहुत सराहनीय हैं। डाक्टर साहब आये। मैंने अपना परिचय दिया, तो पूछा—'आप अकेली आयी हैं ?" मेरे 'हां' करनेपर, उन्होंनें बहुत प्रशंसा की, अपने रूममें बैठाकर मेरी राम-कहानी बड़े ध्यानसे सुनी। कहने लगे "तुममें जीवन-शक्ति है, चिन्ताकी कोई बात नहीं, शीघ्र ही ठीक हो जाओगी।" मेरा वजन लिया तो १६० पौंड निकला और, इसके बाद नर्सको 'पेटपर मिट्टीकी पट्टी' का लेप देनेका आदेश दे दिया। कभी भाप-स्नान कभी मालिश, किसी दिन पैरोंका गर्म स्नान, शरीरकी गीली पट्टी धूप-स्नान, सारे बदनकी मिट्टी लेप आदि कुछ प्राकृतिक-चिकित्साके ढंग हैं, जो बदल-बदलकर दिये जाते। एनिमा, दस मिनटका कटि-स्नान, डेढ़-दो घंटेकी सैर, संतुलित भोजन तो रोजका काम था। प्रथम सप्ताहमें मेरा वजन ६ पाउंड घटा, इसके बाद प्रति-सप्ताह २, २ पाउंड घटने लगा। इस प्रकार १० पाउंडके करीब मेरा वजन प्रति मास घटाया गया। चर्बी जल जाने और बदनका फ़ालतू मांस छंट जानेसे मुझमें सचमुच नयी शक्ति, नया जीवन आ गया। 'आरोग्य-मन्दिर' में रहकर मैंने यह देखा कि, जीवनको बितानेका सही ढंग क्या है ? आहारका ठीक ज्ञान कितना आवश्यक है। मैंने वैसे तो डाक्टर साहबकी आज्ञानुसार अपनेको नियंत्रणमें रखा; लेकिन चायको

तबियत कर आती। चोरीसे दो-चार बार पी भी ली; लेकिन यह बात बहुत दिनोंतक न चल सकी। डाक्टर साहबको पता लग गया। एक दिन मुझसे कहने लगे "देखो तुम चाय पी रही थीं, उस दुकानपर; मैंने स्वयं देखा है।" अपनी भूल स्वीकार करते हुए मैं बोली--"डाक्टर साहब! मेरा वजन तो आपके कथनानुसार ठीक घट रहा है; तो फिर अगर एक-आध कप चाय पी भी ली तो क्या हुआ?" मेरी बात सुन बड़ी सहृदयतासे समझाने लगे कि "यह तो ठीक है कि, तुम्हारा वजन सही कम हो रहा है। लेकिन, तुम्हारा यहां आनेका उद्देश्य क्या है? सिर्फ वजन घटाना या शरीर-शोधन कर सुन्दरसे पुत्र-रत्नकी प्राप्ति? हम आपका शरीर शुद्ध करते हैं और आप चाय पीकर शरीर विषमय बना लेती हैं। देख लो तुम्हारा वजन तो हम घटा देंगे; तुम दुबली हो जाओगी; लेकिन तुम्हें बच्चा न होगा।" ऐसा सुन मैं तो अवाक् रह गयी अपने कमरेमें मैंने एक नन्हें बच्चेकी फोटो लगा रखी थी। अकस्मात् उसी ओर आंखें उठ गयी और उसी दिनसे चायका मैंने पूर्णरूपसे त्याग कर दिया। भगवान्‌ने मेरी इस साधनाका फल भी मुझे तुरन्त दिया, ज्योंही मैं 'आरोग्य-मन्दिर' गोरखपुरसे लौटी तो फौरन बाद मुझे उम्मीद-वारी हो गयी। नौ मास बाद मेरे घरमें फूल-से नन्हें बच्चे ने जन्म लिया। मेरा जीवन खिल उठा। मातृत्वकी जिन सुहावनी और सुखद घड़ियोंके लिए मैं बरसोंसे तरस रही थी, वह घड़ियां मेरी जिन्दगीमें लौट आयीं। बहारें फिर आ गयीं। उसके दो साल बाद मुझे परमात्माने सुपुत्री भी प्रदान की। इस तरह अब मैं दो बच्चोंकी मां हूं। इसके लिए प्रथम परमेश्वरकी और इसके दूसरे दर्जेपर 'आरोग्य-मन्दिर'के संचालक श्री मोदीजीकी आभारी हूं और जीवन भर कृतज्ञ रहूंगी।

—श्रीमती राज चावला

(३)

मेरा विवाह सन् १९५० में हुआ था। और, २३ वर्षों तक मैं संतान-हीन रहा। संतानहीन होना स्वतः कितने दुःखकी बात थी। मैंने इस बीच कितनी ही दवाएं अपनी पत्नीकी करायी। विहारमें तो शायद ही कोई बड़ा चिकित्सक एलोपैथिक, आयुर्वेदिक तथा यूनानीका न बचा होगा, जिससे मैंनेचिकित्सा न करायी हो। दो आनेसे लेकर दो हजार रुपये तक मैंने कितने चिकित्सकों पर व्यय किया, कह नहीं सकता।

इसी बीच दिल्लीके एक चिकित्सक महोदयकी लोगोंने बड़ी तारीफ की। उनकी भी चिकित्सा की। जो दवाएं बाजारसे लानेको कहा, वह तो खरीदी ही, १५५ रुपये प्रति बोतलके हिसाबसे १९ बोतल एक दवा और १२ रुपये प्रति बोतलके हिसाबसे १२ बोतल एक दूसरी दवा मुझे उन्हींसे खरीदनी पड़ी। प्रारम्भमें परीक्षा करनेकी अपनी फीस उन्होंने साढ़े चार सौ लिया। तीन महीनेकी अपनी चिकित्सामें उन्होंने मुझसे २० हजार रुपया खर्च करवा दिया।

इसी बीच एक अन्य बात सुनिए। मेरे भाई श्री गगनदेव सिंह शिक्षा-प्रसार-अधिकारी हैं। वे हृदयकी धड़कनसे ग्रस्त थे। उनकी चिकित्सा सदर अस्पतालमें लगभग डेढ़ महीने चलती रही। पर, उन्हें कोई लाभ नहीं हुआ। उनका प्राकृतिक चिकित्सासे परिचय था। उन्होंने मुझे आरोग्य-मन्दिरमें अपनेको पहुं .ः देनेको कहा। उनको लेकर मैं आरोग्य-मंदिर आया। यहां मात्र ३० दिनके इलाजसे स्वस्थ हो गये।

यहांसे स्वस्थ होकर लौटनेके बाद, उन्होंने मुझसे अपनी पत्नीको भी गोरखपुर भेजनेकी सलाह दी और स्वयं लाकर मेरी पत्नीको आरोग्य-मंदिर पहुंचा गये। यहां उनकी नाना विधि चिकित्सा चालू थी।

पर, उसके यहां आनेके डेढ़ महीने बाद, मुझे शियाटिकाका कष्ट हो गया। उसके साथ ही मुझे ज्वर भी हो आया। घरपर दवाएं चालू थीं; पर कोई लाभ नहीं मिला।

मेरी पत्नी आरोग्य-मंदिरमें थीं ही-मैं भी आरोग्य-मंदिर पहुंचा दिया गया। जब मैं आरोग्य-मंदिर आया तो मेरी पत्नीका उपवास चल रहा था। मेरे पहुंचने पर श्री विट्ठलदासजी मोदीने मेरी परीक्षा की और गरम जलसे भरे आदमकद टबमें लिटा कर मुझे २० मिनट का स्नान कराया गया। मेरी आधी बीमारी तो उस टबमें स्नानके बाद ही चली गयी।

संयोगसे श्री विट्ठलदासजी मोदीके पुत्र श्री कृष्णमुरारी मोदी इंग्लैंड से आस्टियोपैथीकी शिक्षा लेकर लौटनेके बाद आरोग्य-मंदिरमें ही उन दिनों प्रैक्टिस कर रहे थे। अब तो वे बम्बईमें अपना चिकित्सालय चलाते हैं। उस स्नानके बाद डाक्टर कृष्णमुरारी मोदीने मुझे दो सप्ताहमें दो बार आस्टियोपैथिक चिकित्सा दी और मैंने पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त कर लिया। तबसे आज तक मुझे कोई कष्ट नहीं हुआ।

मेरी पत्नी दिसम्बर १९७० में यहां आयी थीं और लगभग ३ महीने यहां रहीं। यहां से लौटकर जानेके बाद वे पूर्ण स्वास्थ्यका अनुभव कर रही थी।

हम दोनोंको अपनी स्वस्थता के अनुभवसे पुत्र-प्राप्तिकी आशा बंध गयी थी। और, भगवान् की ऐसी कृपा कि, यहां इलाज करानेके २० महीने बाद, १ जुलाई १९७३को मुझे पुत्र प्राप्ति हुई। कितनी प्रसन्नता हमें ही नहीं, मेरे पूरे परिवारको हुई होगी, यह आप सहज कल्पना कर सकते हैं। जो मिलता मुझे बधाई देता और आरोग्य-मंदिरका साधुवाद करता।

उसके बाद मुझे दो पुत्रियां हुई। एक दिसम्बर १९७५ में और दूसरी ९ मार्च १९८० को।

यह रही मेरी कहानी—मेरे, मेरी पत्नीके स्वास्थ्य-लाभकी तथा संतान-प्राप्ति की। न अपने भाईको लेकर आया होता और उनको स्वस्थ होते देखा होता, न मेरा प्राकृतिक चिकित्सासे परिचय होता और हम आजीवन ठगे ही जाते रहते। —श्री राजकिशोर 'राकेश'

कृमि

विद्याकी उम्र पांच साल है। कई महीने हुए उसके पेटमें कुछ दर्द शुरू हुआ। फिर दो-चार दिन बाद पाखानेके साथ छोटी-छोटी कीड़ियां दिखाई दीं। उनकी ऐसी वृद्धि हुई कि रातको सोते समय बहुतसे कृमि गुदाद्वारपर रेंगते पाये गये। नन्हीं-सी कोमल बालिकाको यों इस भयंकर रोगसे ग्रस्त देखकर बड़ी चिंता हुई। मैं एक अनुभवी एलोपैथ डाक्टरके पास गया। काफी सोच-विचारकर उन्होंने एक दवा दी और हफ्तेभर रोज सुबह, दोपहर, शाम सेवन करने को कहा। किया, पर कोई लाभ दिखाई न दिया। बड़ी निराशा हुई। एक वैद्यजीसे मिला, सारी कथा कही। उन्होंने धन्वन्तरी-मुद्रा प्रदर्शित करते हुए बड़े गर्वके साथ कुछ गोलियोंके साथ यह आश्वासन दिया कि दस दिनमें इन गोलियों-से रोग समूल नष्ट हो जायगा। धैर्यसे यह दवा भी दी गयी। पर रोग घटा नहीं, कुछ बढ़ा ही।

इसके साथ पिता होनेके नाते मेरी चिंताओंका बढ़ना भी स्वाभाविक था। एक दिन रातको इसी चितामें निमग्न था कि मेरा ध्यान एक-ब-एक प्राकृतिक चिकित्साकी ओर गया। उसी समय मैंने निश्चय किया कि अब इस बालिकाको प्रकृतिकी ही गोदमें सौपूंगा। सबेरा होते ही आरोग्य-मंदिर गया और वहां उसके श्रद्धेय चिकित्सकसे मिला। उनकी चिकित्सा सुनी और उनके आदेशानुसार काम करनेका निश्चय करके घर लौटा।

अब विद्याको दवा देना बंद करके मैंने उसके पेटकी सफाई, थोड़ा

शारीरिक व्यायाम तथा सात्त्विक और निर्यामन आहारपर जोर देना आरंभ किया। पेटकी सफाईके लिए उसे प्रतिदिन प्रातःकाल नीबूका रस और सेंधा नमक-मिश्रित आध सेर गुनगुने पानीका एनिमा दिया गया। एनिमा देनेके आध घंटा बाद मैं स्वयं उसे खुली हवामें कुछ दूर दौड़ाता और कुछ कसरतें कराता। इसका परिणाम यह हुआ कि उसका पेट मुलायम और हलका होने लगा। जहांतक उसके भोजनका संबंध है— मैंने उसे दाल देना बिल्कुल बंद कर दिया और यह सोचकर कि शायद दाल देखकर वह दाल खानेका हठ करे घरके सब लोगोंने दाल खाना बंद कर दिया। केवल रोटी और तरकारीके खानेकी ही चिकित्सकने व्यवस्था दी थी। रोटी और तरकारीके अतिरिक्त उसे मूली, प्याज, खीरा, अमरूद, नीबू और अनन्नास भी दिया जाता था। रोटी और तरकारी केवल दो बार दी जाती थी और फिर जब भूख मालूम होती तो अमरूद और अनन्नास आदि देते थे। अमरूद तो जितनी बार जितने वह खा सकती थी दिया जाता था। यहांतक कि वह रातको भी अमरूद खाकर सोती थी। इससे प्रचलित संस्कारोंके अनुसार न तो उसे कभी खांसी हुई न जुकाम। मेरा ख्याल है कि लोग भ्रमसे ऐसा कहते हैं कि रातको अमरूद खानेसे खांसी हो जाती है। मेरी समझसे खांसी और जुकामका मूल कारण है पेटकी खराबी, अपच और कब्ज।

दस दिनकी खान-पानकी व्यवस्थासे विद्या पूर्ण स्वस्थ हो गयी।

पाखाना शुद्ध होने लगा। कीड़ियोंका कहीं नाम-निशान भी नहीं रह गया। पेट एकदम हलका और मुलायम हो गया। यह प्रयोग किये आज चार वर्ष हो गये वह पूर्णतः स्वस्थ है। अब उसका भोजन पूर्ववत् है। अंतर केवल इतना ही है कि मैं उसे रोज कुछ मौसमी फल खिलाने-से नहीं चूकता और ध्यान रखता हूं कि उसे रोज कुछ हरी तरकारियां जरूर मिल जायं।

—श्रीरमणरेतबिहारी त्रिपाठी, एम० ए

: २६ :

नाड़ी-विकार

उम्र मेरी चौदह सालकी है। यों तो मेरा स्वास्थ्य साधारणतः अच्छा ही था, फिर भी मेरे घरवाले, विशेषकर मेरी मां, मेरे कृशकाय होनेकी शिकायत करती थीं। पर मैंने कभी दुबलेसे मोटे होनेकी कोई दवा नहीं खाई।

मुझे घरसे बनारस पढ़ने भेजा गया। यह सन् १९४६ का साल था। मुझे रोजाना सवारीमें पढ़नेके लिए तीन मील जाना और तीन मील आना पड़ता था। मैं अकेले ही रिक्सेमें बैठकर पढ़ने जाता और स्कूलसे आते समय भी अकेले आता था। इस मेरी स्कूल यात्रामें मुसलमानी मुहल्ला भी पड़ता था, पर मुझे डर नहीं लगता था। मैंने हमेशा वहांके आदमियोंको अपनी ही तरह आदमी समझा। १६ अगस्त, ४६ के कलकत्तेके हिंदू-मुसलिम-दंगेका प्रभाव काशी नगरीतक फैल गया। यहां भी सांप्रदायिक दंगोंने भीषण रूप ले लिया। हमारा मकान मुसलमानी बस्तीसे घिरा हुआ था। दिनभर लोग कर्फ्यूकी वजहसे चुप रहते, पर रातको हिंदू और मुसलमानोंके "हर हर महादेव" और "अल्लाहो अकबर" के नारे वायुमंडलमें गूंज उठते थे। सुरक्षाकी दृष्टिसे हम सब बच्चों और घरकी स्त्रियोंको हमारे चाचाजीने हिंदू मुहल्लेमें एक रिश्तेदारके यहां भेज दिया। और स्वयं मकान और सामानकी रक्षाके लिए वहीं रह गये।

दोपहरको एक आध घंटेके सिवा कर्फ्यू नहीं टूटता था। इन दिनों मैं अपने बड़े लोगोंको भी कुछ भयभीत-सा देखता था। कई बार मुझे

उन लोगोंके मुंहसे सांप्रदायिक झगड़ोंमें होनेवाले स्त्रियों और बच्चोंके वधकी कहानियां सुननेको मिलीं। अब मैं तुर्की टोपी और लुंगी पहने किसी आदमीको देखने पर अपने जीवनको अरक्षित समझता और चिंतित हो उठता।

दंगा ठंढा पड़नेपर जब मैं धीरे-धीरे सदाकी भांति स्कूल भेजा जाने लगा तब मैं मुसलमानोंसे बराबर सशंकित रहता। लेकिन अपनी कमजोरीके कारण यह बात मैं बड़ोंसे कह नहीं पाता था। लगता था कि इससे यह साबित न हो कि मैं पढ़नेसे भागना चाहता हूं।

धीरे-धीरे गर्मीके दिन आये। मैं इस समय सातवें दर्जेमें पढ़ता था। वार्षिक परीक्षा निकट थी, इसलिए सबका अनुरोध था कि मैं पढ़नेमें खूब मेहनत करूं कि पास हो जाऊं। मैं अपने दरजेमें कुछ कमजोर था, अतः एक मास्टर साहबसे घरपर पढ़ता थां। वे मुझे और मेरे भाई रवींद्रको पढ़ाया करते थे। रवींद्रकी और मेरी लिखने-पढ़नेमें प्रतियोगिता चलती थी। कभी-कभी मास्टर साहब हम दोनोंको भाषण करनेकी कला सिखाया करते थे। एक दिन उन्होंने मेरे भाई रवीन्द्रको दंगोंकी बुराइयोंपर बोलनेको कहा। वे खड़े हुए और उन्होंने बड़ी निर्भीकताके साथ दंगोंके दुष्परिणामोंपर अपने विचार प्रकट किए। फिर मेरी बारी आयी। किसी तरह उठ तो गया, पर कुछ समझमें नहीं आ रहा था कि क्या बोलूं। केवल दंगोंकी भयंकरताका दृश्य मेरी आंखोंके सामने नाचने लगा। मैं आगे कुछ न सोच सका और न मेरे मुंहसे बोली निकली। मैं अपनी आंखोंके सामने कुछ धुंधला और पीला-पीला देखने लगा। इसके बाद मैं कैसे मूर्छित हुआ और लोग कितने घबराये यह होशमें आनेपर ही मालूम हुआ। यही मेरी भयकी बीमारीका श्रीगणेश था।

लोगोंने मेरे रोगका कारण गर्मी समझकर मुझे घर, जो नैपालके पहाड़ोंमें है, भेज दिया। सबका खयाल था कि वहांकी जलवायु मेरी

बीमारीको दूर कर देगी। हुग्रा भी कुछ ऐसा ही, कि वहां मुझे इस तरह-की कोई शिकायत नहीं हुई ग्रौर मैं स्वस्थ समझा जाने लगा। मैं वहां दो महीने रहा था।

ग्रगस्तमें पढ़नेके लिए मैं फिर बनारस ग्राया। यहां ग्राने पर एक दिन सड़कपर चलते समय एकाएक कुछ घबराहट-सी मालूम हुई। मैं तुरंत ग्रपनी दादीजीसे, जो मेरे साथ थीं, मुझे किसी सवारीमें घर ले चलनेको कहा——यह मेरी बीमारीका दूसरा वार था। इस वार मैं बिलकुल बेहोश तो नहीं हुग्रा लेकिन एक दूसरी नयी चीज शुरू हो गयी। मेरे हृदयकी गति बहुत तीव्र हो उठी जो डाक्टरोंके खयालसे एक खतरे-का कारण थी। मेरे हृदयकी तीव्रता मुश्किलसे पांच-सात मिनट रहती थी। इस समय मुंह कुछ पीला-सा हो जाता ग्रौर मुंहसे कुछ फेन निलकने लगता। डाक्टर बुलाया जाता। पर, उसके ग्राते-न-ग्राते मेरी हृदयकी गति ठीक हो जाती ग्रौर यह मुझे भला चंगा देख जाता। कभी यह बीमारी दिनमें एक वार ग्रौर कभी दो-तीन बार ग्राक्रमण करती। ग्रब सबको मेरी चिंता होने लगी। मैं ग्रकेला बाहर नहीं जा सकता था। वैद्य-हकीमोंकी दवा शुरू हुई। डाक्टर विटामिन बी0 की कमी बतलाते थे। उनके परामर्शके ग्रनुसार यह ग्रौर दूसरी ग्रनेक दवाएं खायीं; लेकिन बीमारी कुछ रोज रुककर फिर ग्रा जाया करती थी। फिर भी कुछ ठीक समझा जाने लगा।

ग्रब मैं स्कूलके छात्रावासमें रहने लगा। एक दिन हिंदीके दरजेमें मास्टर साहब सभी लड़कोंसे पुस्तक-पाठ करवा रहे थे। एक लड़केके बाद मेरी पढ़नेकी बारी पड़ती थी, ग्रौर वह लड़का पढ़ रहा था कि मुझे कुछ परेशानी ग्रनुभव हुई। हृदयकी गति तेज हो गयी ग्रौर बेहोशी ग्रा गयी। ग्रध्यापक महोदय सज्जन पुरुष थे। वे मुझे छात्रावासके मेरे कमरेमें ले गये, वहां जलके प्रयोगद्वारा होशमें लायें। घरवालोंको जब यह घटना मालूम हुई तो उन्होंने घर बुला लिया ग्रौर ग्रब फिर मेरी

चिकित्सा शुरू हुई। पर गशका रोज आना मामूली बात हो गयी। अब मेरी पढ़ाईसे ज्यादा मेरे स्वास्थ्यके विषयमें बाबूजी वगैरहको चिंता होने लगी। पढ़ाई बंद कर देनेका विचार किया जाने लगा।

उन्हीं दिनों मेरे मंझले चाचाजीके कालेजके एक साथी श्रीकाशिराजजी उपाध्याय हमारे घर आया-जाया करते थे। उन्हें मेरी बीमारीका हाल मालूम होनेपर उन्होंने एलोपैथिक चिकित्साद्वारा मेरी बीमारी जानेपर शंका प्रकट की और प्राकृतिक चिकित्साके अनन्य भक्त होनेके कारण उस चिकित्साशास्त्रका अनुसरण करनेकी सलाह दी। घरके लोग डाक्टरोंकी दवाओंमें तंग आ गये थे इसलिए प्राकृतिक चिकित्सा अपनानेकी सलाह हुई। और मेरे मंझले चाचाजी मुझे एक साथी के साथ गोरखपुरके आरोग्य-मंदिरमें ले गये।

यहां यह बता देना ठीक होगा कि मैं इन दिनों रातको अकेले सोनेसे भी डरता था। किसी-न-किसीको मेरी चारपाईपर मेरे साथ सोना पड़ता। बीच-बीचमें मेरी नींद खुल जाती और मैं डरने लगता। दिनमें कहीं अकेला न जा पाता। कोई मेरे साथ अवश्य होता।

चिकित्सालयमें मेरी चिकित्सामें भोजन-परिवर्तन किया गया। शुद्ध सात्त्विक। सवेरे-शाम कटिनहान। इसके बाद मैं किसीके साथ टहलने निकल जाता। लौटकर स्वस्थ गायोंका आध सेर दूध पीता और साथमें दो-चार लाल-लाल टमाटर खाता। सबेरे नंगे बदन कुछ देर धूपमें रहता। पंद्रह दिनके अंदर मुझे लाभ मालूम हुआ। मेरी घबराहट कम हो गयी, रातको नींद उचटना बंद हो गया और मैं अकेले सोने लगा। फिर भी अकेले जानेसे डरता था। एक दिन डाक्टर साहब ने पूछा, किसका डर मालूम होता है? इसका उत्तर तो मैं कुछ भी न दे सका। इसपर डाक्टर साहबने बड़े प्रेमसे मेरे गालपर चपत लगाकर कहा, "क्यों पगले! जहां भय लगता है वहां भगवान नहीं होते?" और मुस्कराकर कहा, "जाओ, अब मत डरना!"

मैंने डाक्टर साहबको कोई जवाब नहीं दिया, पर उनकी बातोंपर गौर करने लगा। मुझे मालूम पड़ा कि हां, डाक्टर साहब तो ठीक कह रहे हैं।

दो दिन बाद डाक्टर साहबने मुझे गांधीजीकी आत्मकथा पढ़नेको दी। पढ़नेपर लगा कि जिन चीजोंको मैं खोज रहा था वे सब तो इसी पुस्तकमें बंद हैं। मैंने दो बार आत्मकथा पढ़ी। इससे मेरी अकेले रहनेकी हिम्मत बढ़ी और उसे आजमानेके लिए मैं अकेले टहलने जाने लगा। आरोग्य-मंदिरके चारों ओर खेत फैले हुए हैं, कुछ बन-से बाग हैं, सुंदर शांत सड़कें हैं। कहीं कभी डर लगता तो सोचता कि डर काहेका और भगवान्का निवास तो सब जगह है और मुझमें बल भर आता। कभी-कभी मैं गोरखपुर शहरके कोलाहलमें, जो चिकित्सालयसे एक मील दूर है, अपनी हिम्मत आजमाने जाता। वहां भी मुझे कम भय लगता।

अब मुझे योगासनोंका अभ्यास कराया जाने लगा, जिसमें मुझे आनंद आता। मेरे शरीरमें स्फूर्ति आने लगी। मेरा दृष्टिकोण बदल गया। हर चीज मुझे अधिक आकर्षक लगने लगी। अपने जीवनसे भी अधिक प्यार हो गया। मैं पूर्णतया भयमुक्त हो गया। अब मैं घर चला आया। चलते वक्त स्वास्थ्यगृहकी ममता उमड़ आयी। डाक्टर साहबसे अलग होनेको जी नहीं चाहता था पर अलग तो होना ही था। डाक्टर साहबसे विदा लेनी पड़ी।

यह तीन साल पहलेकी बात है। अब मैं बेसेंट कालेजके दसवें दरजेमें पढ़ता हूं। ठीक खानपान और रोजका प्रातः भ्रमण जारी है। साथमें अपने भाई रवीन्द्रके साथ दो मील दौड़ता हूं, जिसमें मुझे बहुत आनंद आता है।

मुझे आशा है अब मैं कभी बीमार नहीं पड़ूंगा।

—श्रीदेवकीनन्दन शर्मा

हैजा

पुराने रोगोंकी चिकित्सामें प्राकृतिक चिकित्सा निश्चित रूपसे लाभ करती है, इसकी जानकारी प्राय: लोगोंको हो गयी है पर तीव्र रोगोंमें अथवा महामारीमें भी प्राकृतिक चिकित्साके सीधे-सादे उपचार बिना खर्चके कितने लाभकर सिद्ध होते हैं यह इस लेख और साथके दो पत्रोंसे जाना जा सकता है।—संपादक

वस्ती जिलेमें पिछले मई-जून महीनेमें हैजा जोरोंसे फैला हुआ था। शहरमें कम, पर गांवोंमें खूब प्रकोप था। इसके रोक-थामकी बड़ी कोशिशें हो रही थीं। जिसमें खास बात थी गांववालोंको हैजेसे बचावका (Cholera Preventive) इंजेक्शन लगाना। इस जिलेके डिप्टी कलक्टर श्रीगोपालजी मिश्र विशेष रूपसे दिलचस्पी ले रहे थे। पर उनकी कठिनाई थी कि इंजेक्शन कम मिलते थे, और जब इंजेक्शन मिलते तो उन्हें गांवोंमें पहुंचानेको मोटरमें पेट्रोलकी कमी हो जाती। अत: यह सहायता भी मुश्किल हो रही थी। ऐसे समय दवाके अभावमें हैजेके रोगियोंकी सहायताकी किसी दूसरी विधिकी तलाशमें गोरखपुर जाकर वे वहां आरोग्य-मंदिरके चिकित्सक श्री विट्ठलदास मोदीसे मिले। प्राकृतिक चिकित्सामें तो किसी दवाकी जरूरत ही नहीं होती। वहां तो मिट्टी, पानी, धूप, हवा ही बड़े साधन हैं। अत: वहांसे जो विधि मिली उसके लिए पैसे-टकोंकी जरूरत न थी, न दवा बांटनेके लिए

डाक्टरकी मोटर चलानेको पेट्रोलकी। एक निहायत सीधा प्रयोग बतलाया गया। रोगीको रोगकी दशामें, गरम पानी, रोगीकी इच्छानुसार ज्यादा-से-ज्यादा पिलाते जाना, और पेड़ूपर मिट्टी रखे जाना। प्राकृतिक चिकित्सालयसे प्राप्त यह नुस्खा डिप्टी साहबने मुझे बतलाया। वह इसलिए कि मैं जिला पटवारी एसोसिएशनका सभापति हूं, इसे वह मेरे मार्फत पटवारियोंको, और फिर जनताको बतलाना चाहते थे।

मुझे लगा कि इससे अवश्य लाभ होना चाहिए। सिसवा (बुजरुग) ग्राममें मैंने लोगोंको हैजेसे पीड़ित पाया। कै-दस्त चल रहे थे, पेशाब बंद था। कइयोंको ज्वर हो रहा था। मैंने तुरंत खूब साफ मिट्टी मंगवायी, उसे कुटवाकर आटेकी तरह छनवाया और फिर ठंढा पानी मिलाकर गुंधवाया, रोटीकी तरह उसकी पट्टियां बनवायीं, जो आधा इंच मोटी फुटभर लंबी और छह इंच चौड़ी होती थीं। मिट्टीकी ये ठंढी पट्टियां मैंने रोगियोंके उदर (नाभिके चारों ओर) पर रखवायीं और रोगियोंको गुनगुना पानी पिलवाया। मिट्टीकी एक पट्टी जब शरीरकी गरमीसे पंद्रह-बीस मिनटमें गरम हो जाती तो उसे बदल देता। इस तरह हर रोगीको दिनभरमें कोई छह-सात पट्टियां बदलनी पड़तीं। पट्टी रखते ही रोगीके कै-दस्त धीरे-धीरे कम होते गये और जो पेशाब बंद हो गया था वह मिट्टी रखनेके एकसे सात घंटेके अंदर जारी हो गया। मुझे इस गांवमें सोलह रोगी मिले थे, जिनकी चिकित्सा मैंने आरंभ की थी, उनमेंसे ऐसा कोई न रहा जिसकी चिकित्सा मैंने सुबह जारी की हो और उसे पेशाब शामतक जारी न हो गया हो। दूसरे दिन सभी रोगी चंगे थे। मैंने अच्छे होनेपर सबको गीला भात, मांड-सा बनाकर थोड़ा खानेको दिया। वहां कोई दूसरी चीज मिलती भी न थी जो इसमें ज्यादा हलकी होती। वह धान-प्रधान स्थान है, मैं उन गरीबोंको दूसरी चीज बता भी क्या सकता था?

मिट्टीकी बदौलत यह हुआ कि जिन सोलह कुटुंबोंमें मृत्युकी

आशंका की जा रही थी उन सभी कुटुंबोंपरसे ये मृत्यु और भयके काले बादल हट गये। मेरा हौसला बढ़ा। मैं डिप्टी साहबकी आज्ञानुसार डुमरियाशुमाली, पचौथ, औंधई आदि ग्रामोंमें गया और वहां भी इसी विधिसे रोगियोंकी चिकित्सा करने लगा। मेरे सामने यह प्रश्न भी न था कि हैजा हुए कितनी देर हुई, रोगीकी हालत क्या है? मेरे पास तो एक ही नुस्खा था जिसे मुझे हर ऐसे रोगीपर चलाना था जिसे कहा जाय कि हैजा हो गया है। मुझे इन गांवोंमें उन्नीस रोगी और मिले और सभीपर इस नुस्खेने काम किया। मुझे यह कहते खुशी होती है कि कोई भी रोगी मरा नहीं। गोकि रोगियोंको अनेकों दस्त आ चुके थे। कई तो ऐसे थे जिनको दो दर्जनतक दस्त हो चुके थे। इस संख्यासे अधिकके भी थे। ज्वर प्रायः सबको था।

अब मैं इस सस्ती और अद्भुत प्रभावशाली मिट्टीको अनेकों रोगोंपर आजमा रहा हूं। सबमें सफलता मिल रही है।

—श्रीपंचमलाल आर्य

आरोग्य-मंदिर, गोरखपुर (उत्तरप्रदेश)

ता० २७—६—४८

प्रिय महाशय,

श्रीपंचमलालजी आर्य आज यहां आये थे। वे बताते हैं कि उन्होंने आपकी बतायी विधिसे मिट्टीका प्रयोग हैजेके पैंतीस रोगियोंपर किया और वे सब-के-सब स्वस्थ हो गये। उनका कहना है कि आप इस चीजसे परिचित हैं। लिखनेकी कृपा करें।

श्री गोपाल मिश्र, डिप्टी कलेक्टर
डुमरियागंज, बस्ती

विनीत
विट्ठलदास मोदी
संचालक

उत्तर

श्रीरामः शरण मम

वस्ती
१२–११–४८

प्रिय महाशय,

आपका २७–६–४८ का पत्र कुछ विलंबसे प्राप्त हुआ। कारण वह गल्तीसे दफ्तरके चक्करमें पड़ गया और बाहर रहनेके कारण आफिसकी भंवरसे निकलनेमें देर हो गयी।

श्रीपंचमलालजीने आपसे जो कुछ कहा ठीक है। उनका लिखा लेख वापिस कर रहा हूं। उसे आप सहर्ष छाप सकते हैं। मैं स्वयं भी श्री-पंचमलालजीकी बातोंकी जांच करने सिसवा गया था और उनके प्रयोगोंकी सफलता संतोषजनक पायी।

मैंने हैजेके रोगीकी चिकित्साके लिए बतलायी आपकी तरकीब सैकड़ों रोगियोंपर बीसियों ग्रामोंमें प्रयोग की और पर्याप्त मात्रामें सफल रहा।

प्राकृतिक जीवनके—मैं इसे चिकित्सा नहीं कहता—मेरे निजी अनुभव भी आश्चर्यजनक हैं, उनपर फिर कभी लिखूंगा। यहां केवल यही कहकर क्षमा-याचना करता हूं कि सोलह माससे मेंरे कुटुंबमें डाक्टर या दवा नहीं आयी है।

श्रीविट्ठलदास मोदी
आरोग्य-मंदिर
गोरखपुर

आपका अपना ही
श्रीगोपाल मिश्र
डिप्टी कलेक्टर, डुमरियागंज, बस्ती
(उत्तरप्रदेश)

: ३१ :

अपेंडिसाइटिस

मेरे लिए अपने मानसिक और शारीरिक विकासकी कहानी लिखना कठिन हो रहा है; क्योंकि इसमें एक ओर तो स्वास्थ्यके संबंधमें वैज्ञानिक दृष्टिकोणकी परमावश्यकता है तथा दूसरी ओर अपनी कमजोरियोंका ब्यौरा परिचितों एवं अपरिचितोंके सामने रखनेका साहस करना है। सबसे बड़ी समस्या उन प्रचलित रूढ़ियोंका विरोध करना है जिन्हें लोग वैज्ञानिक सत्य मानते हैं और उसके विपरीत कहनेवालेको मूर्ख ठहराते हैं। इस प्रकार मेरे इस नम्र प्रयत्नमें वैज्ञानिक चेतना, मानसिक एवं दृढ़संकल्प तीनोंकी ही आवश्यकता है पर यहां तो मेरा उद्देश्य सिर्फ यह प्रकट करना है कि प्राकृतिक चिकित्साने मेरे मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्यमें कैसे क्रांति कर दीं और मुझे वैज्ञानिक रूढ़िवादिताकी परेशानियों से मुक्त कर दिया।

१९४५ की गर्मियोंमें, जब मैं आई० ए० का छात्र था, मुझे सर्वप्रथम पेट-दर्द हुआ। मैंने विशेष खयाल न किया। परंतु हर दूसरे-तीसरे महीने यह दर्द होने लगा। मेरी आई० ए० की फाइनल परीक्षाके समय इसका भयानक रूप प्रकट हुआ। दर्द करीब चौदह घंटे बना रहा और बहुत करने-धरनेपर भी पूरा आराम होनेमें चौबीस घंटे लग गये। बी० ए० में तो दर्दके साथ ही जब-तब बुखार भी आ जाता। दर्दकी भयानकता बढ़ती गयी और अब दर्द महीने-महीने और कभी-कभी तो पंद्रह रोजमें ही आने लगा। इस रोगकी परेशानीमें पढ़ाई-लिखाई कम होने लगी। मुझे आनर्स कोर्सकी पढ़ाई प्रथम वर्षमें ही छोड़ देनी पड़ी तथा

बी० ए० के दूसरे वर्षमें ऐसा मालूम पड़ने लगा कि मुझे पढ़ाई ही छोड़ देनी पड़ेगी।

इस बीचके अपनी चिकित्साके मैं एक-दो उदाहरण देना चाहता हूं जिससे पता चलेगा कि कथित वैज्ञानिक चिकित्सक एवं दवावादी आम जनताकी अज्ञानतासे कैसे लाभ उठाते हैं। पटनेमें एक बड़े डाक्टरने मुझे खून, मल, मूत्र आदिकी जांच करानेको कहा। एकने तो छातीका एक्सरे लेनेकी भी आज्ञा दी, उनकी दृष्टिमें मुझे टी० बी० की संभावना थी। परंतु सौभाग्यवश मैं इन बखेड़ोंसे बच गया, कारण उसी समय मेरे पेटका दर्द एवं बुखार जोर पकड़ गया। बादको मैंने जाना कि यहां मरीजोंके शोषणके लिए ही थूक-खून, टट्टी जांचनेवाले डाक्टरोंकी श्रृंखलाएं बनी हुई हैं। यहांका हर डाक्टर अपने रोगीको श्रृंखलाके सब डाक्टरोंके यहां केवल उन्हें पैसे कमवानेके लिए भेजनेकी चेष्टा करता है। इस पापाचारमय चक्करमें भोले-भाले देहाती और अपनेको अक्लमंद समझनेवाले लोग भी रोगमुक्तिकी मृगतृष्णामें फंसकर सैकड़ों-हजारों खर्च करके भी निराश वापस आते हैं।

बीचमें पटनेके एक प्रमुख होमियोपैथसे भी मेरी भेंट हुई। वह सिर्फ जीर्ण रोगोंका ही इलाज करते हैं। मरीजोंका उनमें (उनकी चिकित्सामें नहीं) अटल विश्वास होना ही उनकी चिकित्साका आधार है। मुझसे पूछा, "आपका मु[illegible]में विश्वास है?"

जाहिर था कि प्रश्न देहातसे आनेवाले भोले-भाले श्रद्धांध रोगियोंके लिए था और बेवकूफीसे भरा हुआ था। मैंने उनसे अनुरोध किया कि वे मुझसे इलाजसंबंधी बातें करें। इसपर आपका प्रश्न हुआ "रामनाम जपते हैं?"

"नहीं"

थोड़ी बातें होनेके बाद उन्होंने १५०) पर अच्छा करनेका ठेका किया और आधे पेशगी मांगे। मैंने सिर्फ २५) दिये। न माननेपर

१०) और दिये। सालभर दवा हुई थी पर मेरी गाड़ी जहां थी वहां-की-वहां रही। पीछे भले ही हटी हो, पेटके दर्दका जोर बढ़ गया था।

मैं निराश होने लगा। पढ़ाई-लिखाईमें जी नहीं लगता था। मनोरंजनके लिए सिनेमा, होटलों एवं काफी हाउसोंकी सैरकी मात्रा बढ़ गयी। खाने-पीनेका समय भी अनियमित हो गया।

सोनेमें रातके प्रायः एक दो बजा देता, उठनेमें सुबह नौ-दस। होस्टलके सैकड़ों साथियोंके बीचमें अपनेको अकेला महसूस करता।

मैं प्राकृतिक चिकित्सासे कुछ-कुछ परिचित था, गांधीजीका आरोग्य-साधन तथा कुछ और साहित्य भी पढ़ा था। बीच-बीचमें उसका सहारा लेनेकी सोचता था लेकिन अभी डाक्टरोंपरसे मेरा विश्वास पूरी तरह चला नहीं गया था। डाक्टरोंके ठाट-बाट और अस्पतालोंके आडंबर मुझे अपनी ओर खींचते थे।

एक दिन दर्दसे बेहोश हो जानेपर मैंने पटनाके सरकारी अस्पतालकी शरण ली और वहांके या कहिए विहारके सबसे बड़े सर्जनने मेरे रोगका निदान अपेंडिसाइटिस किया था। और, उन्होंने मुझे रोग-मुक्त करनेकी कोशिशमें इंजेक्शनोंसे मेरा सारा शरीर भर दिया। फिर भी चार रोज दर्द बना रहा। इस बीच मुझे उन्होंने ७४ इंजेक्शन दिये। और न मालूम कितने दिये जानेपर मैंने सुइयोंकी पीड़ासे परेशान होकर सूई लेनेसे इनकार कर दिया। मेरी बाहें, पुट्ठे और जांघ चलनी हो चुकी थीं। उस पीड़ाके कारण बुखार भी हो गया था। डाक्टरोंने अब अपेंडिक्स (आंत्रपुच्छ) का आपरेशन करना तै किया। आपरेशनके लिए मैं तैयार न था, न मेरे परिवारके लोग ही तैयार थे। मैं गांधीजीके विषयमें पढ़ चुका था कि आंत्रपुच्छके आपरेशनसे उन्हें कुछ भी लाभ नहीं हुआ था, साथ ही मुझे अब दवासे मुक्ति पानी थी। यहांकी पद्धतिसे भी मुझे घृणा हो चुकी थी। डाक्टरोंका रोगियोंमें दिल-चस्पी न होना, उनका अफसराना तरीका, मिथ्याभिमान, हेकड़ी,

नर्सोंका दुर्व्यवहार, नौकरोंकी डांट-डपट सभी मुझपर एक अजीब दुष्प्रभाव डाल रहे थे। मुझे ऐसा लग रहा था मानो मैं एक युद्धबंदी हूं और दुश्मनके कारागारमें हूं। मेरी घृणाकी हद तब आ गयी कि जब मेरे एक सर्जनसे अपने उपांत्र-प्रदाहका कारण पूछनेपर शरीरशास्त्र और दवाशास्त्रके अध्ययन करनेकी सलाह दी गयी—"ऐसे क्या जानोगे, पढ़ो तब जानोगे।"

इस वंदीगृहसे मैंने किसी तरह छुटकारा लिया और प्राकृतिक चिकित्सा करानेका मनसूबा किया। कभी-कभी पटना स्टेशनके बुक-स्टालसे 'आरोग्य' लेकर पढ़नेके कारण मैं गोरखपुरके प्राकृतिक चिकित्सालयसे परिचित था। मैं २६ अक्टूबर १९४७ को वहां जा पहुंचा और उपचार कराना आरंभ कर दिया।

इलाज कराते हुए मुझे मालूम हुआ कि प्राकृतिक चिकित्सा इलाज नहीं, जीवन जीनेका एक तरीका है जिसमें मनुष्य अधिक-से-अधिक अपनी प्राकृतिक आवश्यकताओंको प्राकृतिक तत्त्वोंसे ग्रहण करता है। इन तत्त्वोंसे लाभ पानेके लिए पहले शरीरके अंदरके विजातीय द्रव्यों-का—गंदगीका निकलना आवश्यक है, इसका सर्वोत्तम तरीका फलाहार, उपवास, वायु-स्नान, जलस्नान, वाष्पस्नान, धूप-स्नान आदि है। शुद्ध रक्त, मांस, मज्जा और अस्थिके निर्माणके लिए उचित समयपर उचित आहार ग्रहण करना है। आहार-विहारकी भूलोंके कारण विषाक्तता आ जाती है, उसे दूर करनेकी इस इलाजमें सुंदर व्यवस्था है।

मैं यहां सिर्फ २७ रोज रहा, जिनमें छह रोज उपवास किया, पांच रोज फलाहारपर विताये और छह रोज एक वक्त भोजन किया और दो वक्त फलाहार। साथमें जो कटिस्नान और मेहनस्नान चले उससे भी मुझे काफी लाभ हुआ। उपवासकालमें आश्चर्यजनक बात जो हुई वह दवा तथा इंजेक्शनोंकी प्रतिक्रिया थी। जो रोग इंजेक्शनों एवं दवाओंसे दब गये थे एक-एक करके आये पर एक रोजसे अधिक न ठहरे और एक-

एक बार मुंह दिखाकर सदाके लिए विदा हो गये। "सदा" इसलिए कहा कि आज उन्हें गये पांच वर्ष हो गये हैं।

फलाहार एवं उपवासकालमें एनिमाके प्रयोगसे आंतोंमें पुरानी इकट्ठी गंदगी एकदम साफ हो गयी। गंदगीके साथ दो एक छोटे-छोटे पथरीले एवं काले कंकड़से पदार्थ भी बाहर आये। आश्चर्यकी बात यह हुई कि उपचारके बाद मेरे बहुतसे रोग जिनकी ओर मैंने दवा करते समय ध्यान नहीं दिया था, अपने आप चले गये। प्रतिक्रिया उपवासके तीसरे या चौथे दिन शुरू हुई थी। उस दिन मेरा बहुत ही पुराना दोस्त दाद इतना उभड़ आया कि मैं घबरा उठा। डाक्टरने बतलाया कि यह रोगकी प्रतिक्रिया मात्र है, इसके जानेमें सिर्फ दो-तीन दिन लगेंगे। वही हुआ। कानका दर्द वर्षों बाद उठा। पैरोंमें सूजन आ गयी जो फाइलेरियाकी बचत थी। दांतके मसूड़े फूल उठे, क्योंकि मुझे दांतका पुराना रोग था। उपचारके समाप्त होते-होते मेरे किसी भी रोगका पता न था। अपेंडिसाइटिसका कोई भी लक्षण आजतक प्रकट नहीं हुआ।

इस थोड़े कालमें मैं शरीर-विज्ञानके संबंधमें बहुत काफी जान गया। समुचित आहारका रहस्य एवं छोटे-मोटे मर्जोंका निदान भी समझ गया। सबसे अधिक फायदेकी चीज भोजन तथा उसके पाचन-क्रियाके ज्ञानके विषयमें थी। वास्तवमें ये आज भी मेरी थाती हैं एवं मेरे स्वास्थ्यकी दृढ़ भित्तिरूप हैं। प्राकृतिक चिकित्साके उपचारके साथ ही, वहां अध्ययनकी भी व्यवस्था थी। सुंदर पुस्तकालय एवं सामयिक व्याख्यान किसी भी आरोग्यार्थीको शरीर-विज्ञान एवं स्वास्थ्यका ज्ञान अपने आप करा देते हैं। यहांका वायुमंडल भी व्यक्तिके शारीरिक और मानसिक विकासमें पर्याप्त सहायता पहुंचाता है। यहांके अनुभवोंसे मैं पूर्णतया समझ गया कि भारतीय स्वास्थ्यके स्तरको ऊंचा उठानेके लिए प्राकृतिक जीवनका प्रचार आवश्यक है। दवा या इलाजका स्थान

गौण होना चाहिए, प्रमुख स्थान तो स्वस्थ जीवनकी आवश्यकताओंका ज्ञान कराना है जो सिर्फ इसी प्राकृतिक चिकित्साद्वारा संभव है।

आरोग्य मंदिरसे मैं पूरा नीरोग वापस लौटा। मेरे अनुभवोंसे मेरे पिताजीको, जो दमेसे परेशान थे, बहुत ही लाभ हुआ। स्मरणीय बात यह हुई कि हमारे एक चचेरे भाई, जिनको डाक्टर तथा वैद्योंने जीवन-से निराश कर दिया था, मेरे अनुभवोंसे लाभ उठाकर ५२ वर्षकी अवस्था-में फिर पूर्ण स्वस्थ हो गये तथा अब १५-२० मील आसानीसे एक दिनमें चल लेते हैं। मेरी शारीरिक उन्नतिके साथ-साथ मेरी स्मरण-शक्तिकी सभी शिकायत दूर हो गयी। अब भी जब मैं प्राकृतिक चिकित्सा करानेके पूर्वके अपने चित्रको देखता हूं तो घबरा उठता हूं। वह मैं पाठकोंको दिखानेका साहस नहीं कर पा रहा हूं। वास्तवमें प्राकृतिक चिकित्सा मेरे शारीरिक एवं मानसिक उत्थानका क्रांतिदूत है जिसने अपना अमर संदेश मुझे सुनाया।

—प्रो० केशवप्रसादसिंह एम० ए० "विशारद"

: ३२ :

विविध

दिनमें सात बजेका समय होगा, पासके ईंटोंके भट्ठेका रखवाला एक मिट्टी ढोनेवाली मजदूर लड़कीका हाथ पकड़े लाया। लड़की रो रही थी। मैंने समझा कि किसीने इसे मारा है, उसीकी फरियाद लाया है। दरियाफ्त करनेपर मालूम हुआ कि लड़कीको किसी आदमीने नहीं, बल्कि बिच्छूने डंक मारा है, बायें हाथकी कानी (कनिष्ठिका) अंगुलीके बिल्कुल सिरेपर। पर, पीड़ा व्याप रही थी उसके सारे शरीरमें। उस आदमीने कहा, बाबू, 'एके बिच्छी मरले बा, कौनो दवाई हो तो दे देईं।' मैंने बैठानेको कहा। तीन-चार सेर साफ मिट्टी मंगवाकर सनवाई। लड़कीको वहीं पक्केपर लिटा दिया। सनी हुई मिट्टीकी एक तह नीचे बिछाकर उसके ऊपर उसका पूरा बायां हाथ फैलाया और ऊपरसे पूरे हाथपर मिट्टी छोप दी गयी। दो-तीन मिनटके बाद मैंने पूछा, दर्द कम हुआ? लड़की रोती हुई बोली, 'ऊ बिछिया मार नाहीं गईल, एहसे करकत बा (वह बिच्छी मारी नहीं गयी इसलिए कड़क रही है)। देहाती समझ है कि जो बिच्छू डंक मारे उसे मार डालना चाहिए, तो जहर कम चढ़ता है। मैंने लड़कीसे कहा कि इस मिट्टीमें जादू है, देखो अभी जहर उतारती है। दस मिनटके बाद उसके रोनेमें कुछ कमी हुई। मैंने पूछा, अब क्या हाल है? बोली, 'अबहिंन रेंगत बा' (अभी रेंग रही है)। मुझे इससे अंदाज मिला कि आधा दर्द जाता रहा है। फिर नयी मिट्टी बदल दी। अब लड़कीका रोना बिलकुल खतम हो चुका था और उसकी कुछ सोनेकी प्रवृत्ति थी। सिरहाने एक टाट रख

दी गयी, जिसपर सिर रखकर उसने आंखें बंद कर लीं। पंद्रह मिनट बाद फिर नयी मिट्टी बदल दी। इतना करनेमें कुल घंटा-सवा-घंटा लगा होगा। लड़कीने आंखें खोलीं और पूछा, 'जाई ?' (जाऊ) मैंने कहा, दर्द न हो तो जाओ। उठी और हाथ सामने करके जानेको तैयार हुई। मैंने कहा, हाथ क्यों सामने कर रक्खा है, दूसरे हाथकी तरह लटकानेमें कोई कष्ट होता है ? बोली, कुछ नहीं। मैंने कहा, तब दूसरे हाथकी तरह लटका लो और दोनों हाथ हिलाती अपने कामपर चली जाओ। यही किया उसने।

जिस मिट्टीने मुझे हमेशा ही सफलता और संतोष दिया है आज ही वह व्यर्थ क्यों होती ?

आरोग्य-मंदिरमें तो मैं मिट्टीके चमत्कार रोज ही देखता हूं। लेकिन वहां तो अधिकांश डाक्टर-वैद्योंसे निराश हुए मंद-जीर्ण (Chronic) रोगोंके रोगी ही आते हैं, उनपर मिट्टी, धूप, हवा, पानी, भोजन, उपवास, मालिश आदि कई अस्त्रोंका उपयोग होता है, इसलिए ठीक पता नहीं चलता कि इनमेंसे किस अस्त्रने रोगको दूर करनेमें कितना काम किया। पर जहां मिट्टी-ही-मिट्टीका उपयोग करके फायदा उठाया गया हो तो उसीकी महिमा मानी जायगी।

मैंने बहुत अवसरोंपर खालिस मिट्टीका उपयोग करके लाभ पाया है—कब्जपर, सूजनपर, दर्दपर, किसी जीवके डंक मारनेपर, फोड़ेपर, फुंसियोंपर। इच्छा होती है जिन-जिन रोगोंपर प्रयोग किया है उनमेंसे प्रत्येकके उदाहरण दूं, पर पहले इस विषयपर लिख चुका हूं और आगे भी लिखना ही है, न मिट्टी कहीं जाती न मैं ही अभी मिट्टीमें जाता हूं। इसलिए आज अधिक उदाहरणोंसे लेखको लंबा नहीं करूंगा।

लेकिन एक नये उदाहरणका लोभ तो नहीं छोड़ सकता। कलकत्ताके प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक श्रीकुलरंजन मुखोपाध्यायकी—जो कलकत्ता मारवाड़ी-रिलीफ-सोसाइटीके प्राकृतिक चिकित्सा-विभागके

मुख्य चिकित्सक भी हैं—वहन श्रीमती सावित्री देवी अपने पतिके साथ यहीं रहती हैं। बहनपर भी भाईके प्राकृतिक चिकित्सक होनेका असर खूब पड़ा है। वह अपने और अपने बच्चोंके छोटे-मोटे रोग प्राकृतिक चिकित्साके ही सहारे दूर करती हैं। पिछले दिनों उसके बड़े "रंजन" को मीयादी बुखार हुआ। दौरा हल्का नहीं था। मांका हृदय बच्चेकी कठिन बीमारीसे बहुत घबरा गया था। कभी-कभी श्रीसावित्री देवीका विश्वास डांवाडोल होने लगता। सोचती कि मैं डाक्टर-वैद्यको न बुलाकर सिर्फ मिट्टी, पानीके सहारे लड़केको रखकर कोई अपराध तो नहीं कर रही हूं। कहीं लड़केको हाथसे न खो बैठूं। एकाध बार कह उठती, "दया करे उचित परामर्श दिवेन (ठीक राय दीजिएगा), आमि पूर्णतः आपनादेर भरसाय आछि (मैं आप लोगोंके भरोसे हूं), आपनारा माथेर हृदय जानेन (आप मांका हृदय जानते हैं) आमार ऐक भाई छपराय एई रोगे मारा पड़ेन (मेरे एक भाई छपरामें इसी बीमारीसे चले गये) ताई आमार हृदय भय पाच्छे (इसलिये मेरा जी डरता है) वलून, आमार छेले कतदिने आरोग्य हते पारिवे (बताइए मेरा बच्चा कबतक ठीक हो जायगा)।" बावजूद घबराहटके, उपचार जो बताया गया उसमें रत्तीभर भी फर्क नहीं किया उसने, लड़केसे सारे नियम ज्यों-के-त्यों पलवाये। २७ दिनके बुखारमें लड़का सूखकर कांटा हो गया था। लड़केका बुखारके अंतिम दिनोंमें खानेकी कई चीजोंपर मन चलता। एक दिन वह बोली, "दया करे ऐक दिन एसे छेलेरसमुखे जान कि ताके कखनकी खेते दिते हवे (आप कृपा करके लड़केको देखकर उसके सामने बतला दीजिए कि उसे कब क्या खानेको दिया जायगा)।" मैं गया तो तो लड़का चुप था। वह सशंक था कि क्या यह मेरे खानेकी इच्छाकी पूर्ति करेंगे? मैंने पूछा, कहो, रंजन क्या खाना चाहते हो? उसने मक्खन, दही, किशमिश तथा और कुछ चीजोंपर अपनी इच्छा जतायी। मैंने कहा, सब चीजें तुमको बड़ी जल्दी मिलेंगी। किशमिश तो उसी

दिनसे देनेको कह दिया। लड़का बहुत खुश हो गया कि उसकी एक मांग तो आज ही पूरी हो गयी। मैंने देखा कि मांने लड़केको अबतक कभी कोई बिना बतलायी चीज खानेको नहीं दी थी। एनिमा, स्पंज वगैरह बराबर जारी रखा था। अच्छे होनेके कुछ दिनों बाद उस लड़केको मैंने देखा। मीयादी बुखारके पहले वह जितना तंदुरुस्त था अब उससे अधिक तंदुरुस्त था।

अधिक कमजोरीके कारण लड़केको खाटसे अलग करके टब बाथ नहीं दिया जा सकता था। वह काम पेटपर बराबर मिट्टीकी पट्टीसे ही लिया गया था।

लेकिन मिट्टीका खास फायदा तो श्रीसावित्री देवीने स्वयं उठाया।

एक दिन तीसरे पहर अपने पतिके साथ मेरे यहां आयीं। हमेशा खुश रहनेवाली सावित्री आज पीड़ित थी। बोली, मैं कल कलकत्ता जानेको हूं, मेरी मां बहुत बीमार हैं। मैंने समझा कि मांकी बीमारीकी चितासे उसका चेहरा उदास है। पर, फिर उसने अपने बायें हाथकी कांखके पास पहुंचेपर एक फोड़ा दिखाया। बोली, कल मुझे कलकत्ता तो जाना है और फोड़ेमें बेतरह वेदना है। मैंने पूछा, इसके लिए क्या कर रही हो। बोली, पानीकी पट्टी बांधती हूं। मैंने कहा, मिट्टीको बांधो। उसने पूछा चिराना तो नहीं पड़ेगा? मैंने कहा, यह कोई नहीं कह सकता पर कुदरतपर भरोसा रखो।

मिट्टीको मौका देकर देखो। जिस रिक्शेपर वह आयी थीं उसी-पर एक छोटे बोरेमें आधा बोरा मिट्टी घर ले गयी। संयोगवश दूसरे दिन उसकी मांका कलकत्तामें देहांत हो गया। उसके कलकत्ता जानेकी जरूरत रफा हो गयी। तीसरे दिन आदमीसे कहलाया कि मेरा फोड़ा फूटकर साफ हो गया है। काफी बड़ा फोड़ा था और बड़ा दुःखदायी। मिट्टीने उसपर अपना पूरा जौहर दिखाया।

'ताईजी' से एक स्थानीय वैद्यने पूछा, आप भी ताऊजीके मतमें, यानी प्राकृतिक चिकित्साकी माननेवाली हैं क्या ? जवाब मिला 'नहीं, मैं इन लोगों की सब बातें नहीं मानती, लेकिन दवासे तो मुझे बचपनसे ही नफरत है। इन लोगोंसे इतना मैंने जरूर जान लिया है कि शरीरमें कुछ खराबी दिखाई दे तो खाना तुरंत बंद कर देना चाहिए। दूसरी बात, कहीं दर्द हो तो मैं गर्म पानीकी थैलीका इस्तेमाल करती हूं, इससे बहुत राहत मिल जाती है।' वैद्यने कहा, यह तो हम लोग भी बतलाते हैं। 'ताईजी' बोलीं, 'आप लोग भी बतलाते होंगे, गरम पानीपर किसीका इजारा थोड़े ही है। हां, इन लोगोंकी एक चीज जो मुझे ज्यादा पसंद है, वह मिट्टी है। यह कई चीजोंपर चलती है।' वैद्यजीको मिट्टीके गुणोंका पता नहीं था। पूछने लगे, मिट्टीका प्रयोग ये लोग किन-किन बीमारियोंमें करते हैं ? 'यह मत पूछिए, ये लोग मिट्टीके पीछे पागल रहते हैं। यों तो इन्हें मैं बड़ा पागल गिनती हूं, जिस चीजके पीछे पड़ते हैं, पागलकी तरह लगते हैं, आगे-पीछे कुछ देखते ही नहीं। लोभी जैसे मानता है कि "सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयन्ते"—सोनेमें सारे गुण देखता है वैसे ही ये लोग मिट्टीमें सब रोगोंको दूर करनेकी शक्ति मानते हैं। मैं इनकी बड़ी-बड़ी डींगोंकी बात तो नहीं समझती लेकिन कई तरहके दर्द, फोड़े, फुंसी, कटे, जलेपर मैंने मिट्टीका फायदा देखा है। उस दिन रातको खौलते दूधका 'टोपिया' नौकरके हाथसे छूट गया। दूध मेरे दोनों पांवोंपर गिरा। पांव जल-से उठे। कुछ न सूझा कि क्या करूं। वह पास ही कुर्सीपर बैठे थे। उस नौकरको दूध गिरनेके लिए तो कुछ न बोले, पर जोरसे डपटकर कहा, दौड़कर मिट्टी सानकर ला। दो-तीन मिनटके अंदर ही वह दो-तीन सेर मिट्टी लाया और मेरे दोनों पैरोंपर खूब मोटी-मोटी लगा दी। पंद्रह मिनटके बाद दूसरी बदल दी गयी। यह भी पंद्रह-बीस मिनट रही होगी। उन्होंने तो कहा एक पट्टी और बदल लो, बांधे-बांधे सो जाओ, आंख खुले तब उतार देना। पर मुझे बहुत भारी लग रही थी, इसलिए

मैंने पट्टी उतार दी। मुझे शंका थी फफोले पड़ेंगे, क्योंकि जलेपर मैंने कभी मिट्टी लगाते नहीं देखा था। पर सुबह मैंने देखा कि पैरमें कोई फफोला नहीं पड़ा। मिट्टीकी तो मैं भी कायल हूं।

टब बाथ भी मैंने कभी-कभी लिया है, लेकिन ठंढे पानीमें मैं कांपने लगती हूं, इसलिए उसके उपयोगकी मैं हिम्मत नहीं करती।'

सूरदास कहते हैं—

'यशोदा देख्यो कृष्णहि माटी खात'

कृष्ण कुछ समझकर ही मिट्टी खाते होंगे। पर कृष्णकी देखा-देखी हम मिट्टी खाने लगें तो हानि उठायेंगे। बड़ोंकी रीस—देखा-देखी करनेमें नुकसान होता है। बड़े जो करें वह न करके जो वह कहें सो करना चाहिए। हमें तो मिट्टी लगाकर ही संतोष करना चाहिए।

'मारूफ' नामके एक उर्दू कविने मिट्टीके बखानमें एक उम्दा शेर कहा है, जो पाठकोंकी नजर है—

यह आदमी जो, है इसका तन बदन मिट्टी,
जो चाहता है बने आदमी, तो बन मिट्टी।

—श्रीआनंदवर्धन

(२)

मिट्टीमें भी इतने गुण हो सकते हैं इसका मुझे खयाल ही नहीं था। कभी मित्रोंसे इसकी गुणावली सुनता भी तो विश्वास नहीं जमता। पर "आरोग्य" में मिट्टीके गुण पढ़ते-पढ़ते कुछ-कुछ विश्वास पैदा होने लगा। मैंने अपने घरमें मिट्टीका प्रयोग शुरू किया। मिट्टीके बारेमें आजतक जैसा पढ़ा-सुना था, लाभ उससे अधिक मिला। आज तो इस मिट्टीकी कृपासे मेरे घरसे रोग एक तरहसे विदा हो गये हैं। डाक्टरों-से भी पीछा छूट गया है। रोजाना उनकी फीस और दवाईके बिल चुकाने-में पैसा खर्च होता था वह बच रहा है और जब घरमें बीमारी नहीं तो फिर चारों ओर आनंद-ही-आनंदका अनुभव होता है।

मेरी स्त्रीका सिर बराबर दुखा करता था और गरम भी रहता था। डाक्टरों और वैद्योंसे काफी इलाज करवाया, पर कोई लाभ न हुआ। वैसे कई बार इसके लिए मिट्टीके प्रयोगका विचार किया पर प्रयोगमें विश्वासकी कमीके कारण विचार टलता गया। आखिर एक रोज दृढ़ निश्चय करके मिट्टीकी पट्टीका प्रयोग किया। बंबई-जैसे शहरमें मिट्टीका मिलना भी तो आसान नहीं था। हमारा एक भैया (दरवान) गांवमें रहता था। हमने उससे रोज थोड़ी मिट्टी लानेको कहा। उस मिट्टीको ठंढे पानीमें सानकर कोई आध सेरकी मात्रामें ठंढी-ठंढी माथे-पर रखने लगे। इससे बीस दिनमें सिर दुखना बंद हो गया और सिरकी गरमी भी बिलकुल चली गयी। तबियत खुश रहने लगी। अब मिट्टीपर मेरा विश्वास बढ़ा। मेरी पत्नीका पेड़ू भी भारी रहता था। उसपर भी मैंने वैसे ही मिट्टीकी पट्टी रखनी शुरू की। इससे उस भारीपनमें भी कमी आयी।

आश्चर्य तो मुझे तब हुआ जब मेरी स्त्रीके पैरका दर्द डाक्टरकी दवाईसे और घरेलू मालिश वगैरहसे न जाकर ठंढी गीली मिट्टीके लेप-से चला गया। वह दर्द अचानक बायें पैरमें घुटने लेकर जंघातक पैदा हो गया था। दर्द बहुत जोरका था। इसके लिए नारायण तेलकी मालिश की। पर, कुछ फायदा न हुआ तो डाक्टरके पास पहुंचे। उसने कोई जह-रीला तेल मालिशके लिए दिया मगर दर्द बजाय घटनेके बढ़ने लगा। इस समय मिट्टीके प्रयोगका विचार आया। मगर सोचा यह तो ठंढी होती है, शायद ठंढ से दर्द बढ़ जाय। पर जब तकलीफ भोगते एक सप्ताह हो गया और दर्द किसी तरह न गया तब हारकर एक दिन मिट्टीकी पट्टी चढ़ाई। यह प्रयोग रातको सोते वक्त किया था। दूसरे दिन सबेरे दर्दमें बारह आना कमी थी। फिर क्या था, दूसरे दिन फिर पट्टी चढ़ायी गयी। इस दूसरे प्रयोगसे दर्द कतई नहीं रहा।

मेरे बंगलेके दरबान बंशीधर शुक्लको एक दिन कै और दस्त होने

लगा। बंबई-जैसे शहरमें पड़ोसी इसे बरदाश्त नहीं कर सकते और न छिपा सकते हैं। ऐलान हो गया शुक्लको हैजा हो गया है। लोग कहने लगे अस्पताल भेज दो। शामको छह बजे मैं आफिससे लौटा तो कुल किस्सा सुना। मैंने तुरंत सलाह दी कि मिट्टीकी पट्टी पेटपर रखी जाय। ऐसा ही किया गया। कोई बीस-बीस मिनटके अंतरपर बदल-बदलकर तीन पट्टी रखी गयी। कै और दस्त तो पहली पट्टीसे ही बंद हो गये। मगर तीसरी पट्टीके बाद तो बंशीधर शुक्ल हंसने लगा और खड़ा होकर मेरे पास आया और बोला कि मुझे भूख लगी है। मैंने उसे कलतक कुछ न खानेको कहकर विदा किया।

हमारे भवानी-भवन बंगलेपर मल्लू सिंह राजपूत रहता है। उसको मलेरियाने आ घेरा। डाक्टरसे हाथमें इंजेक्शन लिया, जिससे उसका हाथ सूज गया और टेढ़ा हो गया। दर्द तो बढ़ा हुआ था ही। मैंने उसको मिट्टीकी पट्टी चढ़ानेकी सलाह दी। तीन दिनमें ही हाथ सीधा हो गया। दर्द चला गया। बुड्ढा खुश हो गया। बिना पैसा खर्च किये बिना तकलीफसे ऐसा फायदा! वहां रहनेवाले सभी लोगोंको आश्चर्य हुआ। अब तो वह जरा ही शिकायत होनेपर मिट्टीका ही प्रयोग करता है और मैं भी अपने आपको एक छोटा-मोटा डाक्टर मानने लग गया हूं। मुझमें इस बातका विश्वास पैदा हो गया है कि इस मिट्टीके प्रयोगसे सब बीमारियां अवश्य ठीक हो सकती हैं, शर्त है समझकर प्रयोग करनेकी।

—श्रीश्यामदेव देवड़ा

(३)

लोग बटाऊ—राहचलतों तकसे अपना इलाज पूछते हैं, फिर मुझसे न पूछें यह कैसे संभव था, जब कि वे जानते थे कि मैं एक प्राकृतिक चिकित्सालय चलाता हूं। जेल जाकर मैं बहुत चाहता तो नहीं था कि वहां इन अड़गोंमें पड़ूं, पर संसारमें केवल अपनी चाही होती ही कहां है? दो-चार दिन ही बीते होंगे कि पूछताछ शुरू हुई, "हमें यह रोग है, क्या

करें, उन्हें वह है तो क्या करें।" मैंने जेलमें जो कुछ हो सकता था तदनुसार उपचार बताना शुरू किया। बाहर तो और चीजें भी मिल जाती हैं पर जेलमें सुलभतासे मिट्टी ही मिल सकती है, इसलिए पहले उसीकी ओर निगाह गयी। बाहर चिकित्सालयमें एक साथ बहुत-सी चीजें चलनेके कारण मिट्टीके जौहर देखनेके अवसर कम मिलते हैं पर जेलमें तो वह खूब देखनेको मिले।

(१) एक भाई स्वप्न-दोषसे सताये हुए थे। जेलमें चौदह महीनोंसे थे और आनेके चार महीने बादसे प्रायः नित्य स्वप्न-दोष होता था उन्हें। उनके रोगकी बात सारा बैरिक जानता था। लोग कुशल-क्षेमकी तरह सबेरे उनसे पूछते, "रात कैसी रही?" और वह मुंह लटका लेते। कोई कुछ बता दे, करनेको तैयार, खानेको तैयार, जो दवा दी खायी। जेलरतकने उनपर अपनी दवा आजमायी। इमलीके चीयें (बीज) मंगाये, उनकी गुद्दी, दूधमें पकाकर पाक बनवाया। चालीस दिन खाया, पर व्यर्थ। सिविल सर्जन साहब भी हार मान चुके थे। कह दिया था, रोज सबेरे दौड़ा करो, अच्छे हो जाओगे। कमजोरीकी शिकायत करनेपर दूध बढ़ा देते थे। मुझसे उन्होंने पूछा—"क्या मैं अच्छा हो सकता हूं?" मैंने कहा "जरूर"। पर ऐसे आश्वासन वह बहुत पचा चुके थे। इस कथनसे उनके मनमें कोई आशा न जागी। उन्होंने कहा "अच्छा! आप यह बताइए कि क्या करूं?" मैंने बतलाया सेर-डेढ़-सेर साफ मिट्टी ठंढे पानीसे भिगोकर हलुआ-सरीखा बनाकर पेड़ूपर रातको सोते समय बांधना और सबेरे उठनेपर या बीचमें नींद खुलनेपर उसे हटा देना। इस प्रयोगसे तीन दिनतक उन्हें स्वप्न-दोष नहीं हुआ, किंतु इससे उन्हें कोई विशेष प्रसन्नता नहीं हुई। पर चौथे दिनसे बहुत खुश थे। पर छह दिन स्वप्न-दोष रुककर दो दिन लगातार हुआ तो वह खुशी गायब हो गयी। अब मैंने इन्हें खान-पानकी बात बतलायी। दाल-भात बंद, रोटी-साग खाना और मक्खन निकाला हुआ दूध या

उसका दही। जेलमें जो दूध मिलता था उसमें मक्खन निकालनेके लिए मथनी खोजनेकी जरूरत नहीं थी। ठेकेदार लाता ही ऐसा दूध था कि जिसमें चिकनाई शायद नांमकी ही हो। इस भोजनके सिवा बेलकी दस-पंद्रह पत्तियां पीसकर सवेरे पीनेकी सलाह दी। मिट्टीकी पट्टी तो रही ही। लगातार दस दिनतक उन्हें स्वप्न-दोष नहीं हुआ। इसी बीच उनकी रिहाई आ गयी। संभव है बाहर इसी इलाजपर चलकर उन्होंने रोगसे रिहाई पायी होगी।

उक्त भाईको स्वप्न-दोषमें लाभ होते देखकर और अनेकोंने भी पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी बांधनी शुरू की। लोग रातको अपनी थालियोंमें मिट्टी लाकर रख लेते थे और ६-१० बजे बांधकर सो जाते थे। पाठक सुनकर ताज्जुब करेंगे कि बाहर तो धनदौलतकी चोरी होती है पर यहां एक दूसरेकी मिट्टी चुरानेमें भी न चूकते थे।

(२) एक नवयुवक खांसीके मरीज थे। रातको जो खांसी चलती तो रुकनेका नाम न लेती। इसकी वजहसे औरोंको भी बड़ी परेशानी थी। मैंने इन्हें भी पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी रखनेको कहा, तो ये समझे कि मैं मजाक कर रहा हूं, कहने लगे "मैं आपसे गलत नहीं कह रहा हूं, मुझे स्वप्न-दोषकी शिकायत बिल्कुल नहीं है।" मैंने कहा, "तो मैं कहां कहता हूं कि आपको स्वप्न-दोषकी शिकायत है, मैंने आपकी खासीके लिए ही मिट्टी बतायी है।" वह आश्चर्यसे बोले, "स्वप्न-दोषमें मिट्टीकी पट्टी पेड़ूपर रखना समझमें आता है, पर खांसीमें भी पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी?" मैंने कहा रोगोंका आरंभ तो आंतोंसे ही होता है, उसीकी चिकित्सा है यह। आपका पेट साफ होने लगेगा, आंतोंकी गरमी कम होगी, विकार निकलेगा और जो विकार यों न निकल सकनेके कारण खांसीके रूपमें मुंहसे निकलनेका प्रयत्न कर रहा है उसे रास्ता मिल जानेपर आपकी खांसी जाती रहेगी। वह समझ गये। पांच-सात दिनमें

ही उन्हें लाभ प्रतीत हुआ। दस-पंद्रह दिन बाद उन्हें इस प्रयोगकी जरूरत नहीं रही।

(३) इन भाईको दस वर्ष पहले उपदंश हुआ था। कहने लगे, मैंने इसकी चिकित्सा की, पर मेरा खून अभी साफ नहीं हुआ है। मुझे दो-तीन वर्ष पर गुदाके पास एक फोड़ा होता है जो महीनों लेकर जाता है। बड़ी देरमें पकता है, चीरे जानेपर भरनेका नाम नहीं लेता, वैसे ही फोड़ेकी शुरुआत दो सप्ताहसे हो रही है। डाक्टर रोज ही प्लास्टर बांधता है पर वह सूजता ही जाता है, यही हालत रही तो मुझे उसका आपरेशन कराना पड़ेगा। किसी तरह यह आफत टल जाती तो अच्छा होता। इन्हें बताया कि आपका खून तो साफ, महीनों फल, दूध तथा तरकारियोंपर रहनेसे होगा, जिसकी सुविधा तो बाहर ही हो सकती है, पर यहां आप मिट्टीकी पट्टी जहां फोड़ा हो रहा हो, दिनमें तीन-चार बार घंटे-घंटे भरके लिए बांधिए, इससे आपका फोड़ा दबना चाहिए। प्रयोग करके पांच-छह दिन बाद उन्होंने बतलाया कि कुछ कम जरूर हुआ है, पर बहुत नहीं। तब मैंने फोड़ेपर दिनमें एक बार बीस मिनट-तक भाप देने और उसके बाद मिट्टी बांधनेकी बात बतायी। किया उन्होंने, और एक सप्ताहके बाद वे बिल्कुल ठीक हो गये।

(४) ये दोनों पैरोंपर उकवत (एक्जिमा) के मरीज थे। ठेहुनेसे लेकर नीचे अंगुलियोंतक पैर खराब हो रहा था। मैंने उनसे भी कहा कि यहां तो मिट्टी ही है। दिनमें दो बार पैरोंपर मिट्टीका लेप कीजिए, लाभ होगा। बन सके तो नमक भी छोड़ दीजिए और दाल भी। पांच-सात दिन बाद वे फिर आये। रोगमें विशेष फर्क नहीं था, पर वे कहते थे कि इतना फायदा तो अबतक किसी भी दवाने नहीं किया था। मैंने उन्हें बतलाया कि आपके रोगकी जड़ तो आपके रक्तमें है, मिट्टी ऊपरी जहरको खींचकर साफ कर देगी। पर जबतक रक्त साफ नहीं होगा तबतक यह रोग जायगा नहीं। उन्होंने कहा, साहब, देखा जायगा जब

जड़ जायगी; आज तो खाज नहीं आती, नींद ठीक आ जाती है, इतना ही क्या कम है।

(५) इनके शरीरकी सारी ही त्वचा सूखी रहती है, मोटी हो गयी है, खाज आती रहती है। इन्हें सारे बदनमें मिट्टी लगाकर धूपमें आध घंटे रहनेके बाद स्नान करनेकी हिदायत की। वह इसे पांच-सात ही दिन कर पायी। बाकी सब ज्यों-का-त्यों था पर खाजमें कमी हो गयी थी।

(६) एक बिल्कुल अपरिचित भाई एक दिन आकर कहने लगे, मेरे पेटमें जलन और सिरमें दर्द होता रहता है। आंखोंपर भी गर्मी बनी रहती है। सबेरे तो कुछ पेट साफ हो जाता है पर शामको तो दस्त होता ही नहीं। कोई सरल प्रयोग बतायें। मैंने इन्हें हाथ-मुंह धोकर सबेरे दस-पंद्रह बेलकी पत्ती चबानेको कहा और रातको मिट्टीकी पट्टी पेड़ूपर रखने को। पंद्रह ही दिनमें उनकी सभी व्याधियां चली गयी। मिले तो बोले, "मिट्टीकी पट्टी मैंने रखनी बंद कर दी है पर बेलकी पत्ती अब भी चबाता हूं। और सब ठीक है पर अब मुझे सबेरे ही ४ बजे शौचकी तेज हाजत होती है और अड़गड़ा सबेरे छह बजे खुलता है। कैसे रोकी जाय हाजत?" मैंने कहा इसे रोकनेकी जरूरत? यह तो जरूरी चीज है। अगर आप हाजतको छह बजे बुलाना चाहते हैं तो दोपहरको आप भोजन अब जिस समय करते हैं उससे दो घंटे बाद कीजिए। सबेरेकी हाजत दो घंटे बाद होगी। यह कहनेपर उन्हें हाजत ४ बजेके बजाय ६ बजे होने लगी।

मिट्टीकी पट्टी और बेलकी पत्तीके अलावा उपवासका भी प्रयोग काम करता है। पर, एनिमाका सुभीता और लंबा उपवास तोड़नेके लिए फल-तरकारियोंकी सुविधा न होनेके कारण एक दिनसे ज्यादा उपवास किसीको नहीं कराया। इस एक दिनके उपवाससे रोगोंका साधारण जुकाम, हल्का ज्वर, शरीरका भारीपन, तबियतका उचाट

आसानीसे चला जाता। जीर्ण रोगी हर चौथे दिन एक दिनका उपवास करते थे और उससे लाभ बतलाते थे।

गरम मिट्टी

दो कैदी आपसमें बेंतकी सजापर बातें कर रहे थे—

"बारह महीनेकी सजा अच्छी पर बारह बेंत नहीं अच्छे।"

"मैं तो बेंत ही पसंद करूंगा, सालभर रोजकी तकलीफसे तो बच जायगा आदमी।"

"आप बेंतकी चोट नहीं जानते, इसीसे बेंत पसंदकी बात करते हैं।"

"एक महीनेके लिए एक बेंत। कितनी ही तकलीफ क्यों न हो, बेंत ही सहना अच्छा है।"

"आप किसीको बेंत खाते देख लेते तो कभी यह न कहते। बताइए तो यहांकी बेंत कैसी होती है? कहीं आप स्कूलके मास्टरवाली बेंत तो नहीं समझ रहे हैं?"

"उससे कुछ ज्यादा मोटी होती होगी और क्या?"

"अरे, कुछ नहीं, बहुत ज्यादा मोटी होती है और इस्तेमाल करनेके बारह घंटे पहले उसे तेलमें भिगो देते हैं और जिसे मारते हैं उसे टिकटी-पर बांध दिया जाता है। हाथ-पैर बंधे रहते हैं, चूतड़ खुला रहता है। डोम दस गजकी दूरीसे बेंत भांजता दौड़ता हुआ आता है और पूरी ताकतसे चूतड़पर मारता है, जेल अधिकारी खड़ा देखता रहता है और कहता है "और जोरसे!" डोम और हुमचकर मारता है। कैदी चिल्लाने लगता है, सारा जेल कराह सुनकर कांप उठता है। उस कैदीसे हफ्तों उठा नहीं जाता। पाखाने जाते वक्त प्राण निकलने लगते हैं।"

"सबसे बुरी बात तो यह है कि बेंत खानेके बाद बड़े जोरसे गुस्सा आता है" एक तीसरे भाई बोले।

मैंने पूछा, "किसपर?"

"अपनेपर, और मजिस्ट्रेटसे लेकर मारनेवालों तकपर।"

"यह ज्यादा कष्टका है या मारकी चोट।" पहले भाईने सूत्र पकड़ा।

यह बात हो ही रही थी कि एक भोला-सा देहाती मेरे सामने आकर खड़ा हो गया।

"आप ही कुदरती इलाजके डाक्टर हैं?"

मैंने कहा, "कहो।"

बोला, कहूं क्या, खुद देख लीजिए। उसे कांवरू (पीलिया) हो रहा था। आंखें पीली, सारा बदन पीला। वह पांच-सात दिनमें ही छूटनेवाला था। इस रोगका कोई इलाज जानना चाहता था, मैंने बता दिया। उठा और जाने लगा। दस ही कदम गया होगा कि मैंने उसे बुलाया।

"तुम लंगड़ाते क्यों हो?"

"मुझे चार महीने हुए बेंत लगे थे।"

"कितने?"

"एक दर्जन।"

"और दर्द अभीतक नहीं गया?"

"यहांके डाक्टरने बहुत दवा लगायी, पर दर्द नहीं जाता। दर्दकी वजहसे जमीनपर पैर पूरा नहीं पड़ता। वहां कोई साधन नहीं दिखाई दिया जिससे मैं उसका दर्द खो सकूं। मैंने उसे बिठाया, एक भाईसे दो सेर मिट्टी लप्सी-सी सानकर गरम करके मंगवायी और सुलाकर दर्दकी जगह मिट्टीसे सेंकी और फिर मिट्टी दर्दकी जगहपर चारों ओर फैलाकर बांध दी। एक घंटे बाद मिट्टी हटा दी और यह प्रयोग उसे सुबह-शाम दो बार करनेको बता दिया। उसने शुरू किया। मैं उससे दोनों वक्त पूछता, कुछ लाभ है? वह कहता कुछ कम हो रहा है। चौथे दिन सुबह मैंने अपने अड़गड़ेमें बैठे-बैठे देखा वह मजेमें जेलके आंगनमें लोगोंके साथ तेजीसे टहल रहा है, चलनेमें लग नहीं है।

मैंने मनमें कहा—

"विष्णुपत्नि (अर्थात् पृथ्वी माता) नमस्तुभ्यं!"

—विट्ठलदास मोदी

प्राकृतिक चिकित्सा क्या है ?

रोज-ब-रोज डाक्टरोंकी तादाद बढ़ रही है और साथ-साथ अनगिनत ओषधियोंकी, पर आंख उठाकर देखें तो हर आदमी आपको किसी-न-किसी रोगके चंगुलमें फंसा मिलेगा। इससे साबित होता है कि दवाएं आदमीको न तंदुरुस्त रख सकती हैं, न कर सकती हैं।

प्राकृतिक चिकित्सकोंने तजुरबेसे जाना है कि रसायन और दवाए रोगको अच्छा करना तो दूर रहा, उल्टे रागको—उसके कुछ लक्षणों-को—कुछ वक्तके लिए दूर करके, बाहर निकलते हुए रोगको शरीरके भीतर दबा देती हैं। जैसे गांवमें कूड़ा-कचरा इकट्ठा होकर बीमारी फैलाता है वैसे ही शरीरकी गंदगी निकल न पानेपर अंदर सड़ने लगती है। वही गंदगी सब रोगोंकी जड़ है।

गलत भोजनकी वजहसे पैदा हुई सड़न, अपच, दवाओंके जहर, इंजेक्शन, टीका वगैरह इस गंदगीको बढ़ाते हैं।

शरीरसे गंदगी निकालनेकी कुदरती कोशिश ही रोग है, और रोगके लक्षण इस कोशिशका कुदरती नतीजा है। कुदरती इलाज इस गंदगीको शरीरसे निकाल फेंकनेमें पूरी मदद पहुंचाता है और मनुष्यको स्वस्थ, सशक्त एवं सतेज बनाता है।

कुदरती इलाजके मददगार हैं उपवास, फलाहार, संतुलित भोजन, पानी, मिट्टी, धूप, प्राणायाम, आसन, कसरत और मालिश वगैरह, जिनसे रोग दबते नहीं; बल्कि जड़से नेस्त-नाबूद होते हैं।

आरोग्य-मंदिर

इन्हीं सिद्धांतोंके अनुसार चिकित्साकी सुविधा देनेके लिए आरोग्य-मंदिरकी स्थापना की गयी है। विशेष जानकारीके लिए आरोग्य-मंदिरका परिचय-पत्र मंगानेकी कृपा करें।

प्रबंधक, आरोग्य-मंदिर, गोरखपुर (उ० प्र०)

अगर आप चाहते हों

कि

* आपके घरभरका शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य ठीक रहे,
* दवा-दारूसे पिंड छूटे,
* खान-पान-व्यायाम आदिके बारेमें जरूरी हिदायत मिलें,
* भोजन-संबंधी खोजोंका नया-से-नया ज्ञान प्राप्त हो,
* नामी प्राकृतिक चिकित्सकोंके लेख पढ़नेको मिलें,
* बिना दवा-दरपनके पुराने रोगोंसे छुटकारा पाये हुओंके बयान उन्हींकी जबानी जानें,
* 'आरोग्य-ग्रंथमाला' की पुस्तकें पौने मूल्यमें मिलती रहें तो

''आरोग्य''

मासिकके ग्राहक बन जाइए। इसका हर अंक स्वतंत्र पुस्तककी भाँति होता है। वार्षिक शुल्क ६० रुपया; एक अंकका ५ रु०।

व्यवस्थापक—आरोग्य, गोरखपुर, (उ० प्र०)

हमारे प्रकाशन

१. रोगोंकी सरल चिकित्सा
२. रोगों की नयी चिकित्सा
३. जल-चिकित्सा
४. आहार-चिकित्सा
५. प्राकृतिक जीवनकी ओर
६. बच्चोंका स्वास्थ्य और उनके रोग
७. स्वास्थ्य के लिए फल-तरकारियां
८. उपवाससे लाभ
९. उपवास चिकित्सा
१०. सर्दी-जुकाम-खाँसी
११. आदर्श आहार
१२. कच्चा खानेकी कला
१३. दुग्ध-कल्प
१४. सुगठित शरीर
१५. योगासन
१६. जीनेकी कला
१७. उठो!
१८. बढ़ो!
१९. जीने का मर्म
२०. तंदुरुस्त कैसे रहें?
२१. यूरोप यात्रा
२२. कश्मीर में पन्द्रह दिन
२३. स्वास्थ्य कैसे पाया

मुद्रक : अशोक मुद्रण गृह, ५२/४२ ताशकन्द मार्ग, इलाहाबाद-२११००१